 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

आषाढ़-सावन, संवत् नानकशाही ५४७
वर्ष ८ अंक ११ जुलाई 2015

संपादक : सिमरजीत सिंघ

चंदा	
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**



फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

जनम जनम के दूख निवारै सूका मनु साधारै ॥
दरसनु भेटत होत निहाला हरि का नामु बीचारै ॥१॥
मेरा बैदु गुरू गोविंदा ॥
हरि हरि नामु अउखधु मुखि देवै काटै जम की फंधा ॥१॥रहाउ॥
समरथ पुरख पूरन बिधाते आपे करणैहारा ॥
अपुना दासु हरि आपि उबारिआ नानक नाम अधारा ॥२॥६॥३४॥ *(पन्ना ६१८)*

पंचम पातशाह सोरठि राग में अंकित इस पावन शबद में सच्चे गुरु के दर्शन के मनुष्य-मात्र पर निर्मल प्रभाव तथा उसके सत्यवादी रूहानी ज्ञान के प्रकाश द्वारा जिज्ञासु का पूर्ण आत्मिक कल्याण करने की असीम क्षमता को दर्शाते हुए गुरमति शाहमार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि हे भाई! सच्चा गुरु जीव अथवा मनुष्य-मात्र के अनेक जन्मों के कष्ट दूर कर देता है। सच्चा गुरु आत्मिक जीवन रूपी हरियाली से विहीन मनुष्य-मात्र के शुष्क मन को हरा-भरा कर देता है, चूंकि वह उसको प्रभु-नाम की औषधि बख़्श देता है। सच्चे गुरु के दर्शन ही से दर्शनार्थी निहाल अथवा पूर्णत: प्रसन्नचित्त हो जाता है तथा वह फिर परमात्मा के नाम का चिंतन-मनन करता है।

गुरु साहिब कथन करते हैं कि मेरा वैद्य गुरु है जो परमात्मा का अपना ही रूप है। सच्चा गुरु परमात्मा के नाम की औषधि मनुष्य-मात्र अथवा जिज्ञासु के मुख में स्वयं रहम करके डाल देता है तथा इस प्रकार यम की फांसी अथवा नाशवान संसार में जीव के मृत्यु के भय को दूर कर देता है जो पूर्ण क्षमता वाला पूरा परमात्मा है, उसने वैद्य रूप गुरु को स्वयं ही पैदा अथवा प्रकट किया है। उसी मालिक वैद्य गुरु ने अपने दास को अथवा नाम-अभिलाषी को नाम-औषधि प्रदान कराकर उभार लिया है। अब यही नाम-औषधि मेरा आधार है अर्थात् मैं इसके बिना रह नहीं सकता।





श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की बख़्शिश-मीरी-पीरी

छठम् पातशाह साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने श्री गुरु नानक देव जी की विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए सिक्ख धर्म में नवीन जागृति पैदा की। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने श्री अकाल तख़्त साहिब की सृजना कर, मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण कर सिक्खों में धर्म तथा राजनीति दोनों के सुमेल को प्रक्ट करना एवं इनकी महत्ता को समझना था। पहले भी गुरु साहिबान द्वारा इस प्रति गुरबाणी में समझाया गया था कि :

-तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई ॥ *(पन्ना १०८८)*
-राजे सीह मुकदम कुते ॥
जाइ जगाइन्हि बैठे सुते ॥ *(पन्ना १२८८)*
-तखति बहै तखतै की लाइक ॥ *(पन्ना १०३९)*

समाज में राजकीय, धार्मिक, सामाजिक गिरावट को श्री गुरु नानक देव जी ने अनुभव कर लिया था। उस समय समाज विदेशी हकूमत और प्रोहित श्रेणी की गुलामी की जंज़ीरों में बुरी तरह जकड़ में आ चुका था। श्री गुरु नानक देव जी ने समाज को समझाया तथा उनके अंदर छिपी शक्ति को उजागर किया। गुरु जी ने लोधियों तथा मुगलों को शरेआम वंगार कर कहा कि आप बुजदिल और निर्दय हो। गुरु जी ने आम अवाम को गौरवमयी जीवन जीने तथा उनको अपनी संस्कृति के प्रति जागृत करने के लिए बहुत ही स्पष्ट तथा भावपूर्ण शब्दों से झंझोड़ा :

-घरि घरि मीआ सभनां जीआं बोली अवर तुमारी ॥ *(पन्ना ११९१)*
-सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ *(पन्ना १४२)*
-कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥ *(पन्ना १४५)*

गुरु जी ने ज़ालमों का मुकाबला करने के लिए समाज को अपने अंदर छिपी शक्ति को प्रक्ट करने की ताकीद करते हुए सुचेत किया कि ज़ालिम के जुल्म का मुकाबला करने के लिए शारीरिक शक्ति ही काम आएगी :

कोटी हू पीर वरजि रहाए जा मीरु सुणिआ धाइआ ॥
थान मुकाम जले बिज मंदर मुछि मुछि कुइर रुलाइआ ॥
कोई मुगलु न होआ अंधा किनै न परचा लाइआ ॥

गुरमति के आगाज से लोगों को धार्मिक, राजकीय, सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना की प्राप्ति हुई। एक तरफ 'सच्च की बाणी' का प्रकाश हुआ। दूसरी तरफ दुष्कर्मियों की बुरी साज़िशें अपने मनसूबों को कामयाब करने के लिए सचाई की आवाज को दबाने के प्रयत्नों में लग गई। यहां तक कि उस समय बादशाह जहांगीर ने सचे पातशाह साहिब श्री गुरु अरजन देव जी की गुरमति विचारधारा को 'कूड़ की दुकान' तक कहकर गुरु जी पर बहुत अत्याचार कर शहीद कर दिया।

श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद ११ वर्ष की आयु में ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने गुरगद्दी की ज़िम्मेदारी संभाली। गुरता गद्दी पर विराजमान होते समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण कर संगत को हुक्म कर दिया कि आगे से दर्शनी भेटा अच्छी जवानियां, अच्छे हथियार तथा अच्छे घोड़े ही लेकर आए। उस समय मुगल हकूमत थी। मुगल हकूमत द्वारा गैर मुसलमानों के लिए घोड़े की सवारी, शस्त्र धारण करना, दसतार सजाना, बाज़ रखना आदि का कड़ा निषेध था क्योंकि यह सभी राजकीय स्वतंत्रता के चिन्ह थे। इन पाबंदियों को भारत की जनता राजकीय हुक्म समझ कर प्रवान कर चुकी थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी इस बात को भली-भांति जानते थे कि अगर समाज को ज़ालिमों के ज़बर-जुल्म से मुक्ति दिलवानी है तो उनके अंदर स्वाभिमान की भावना लानी पड़ेगी तथा विदेशी हकूमत के डर को दूर करना पड़ेगा। इस कार्य के लिए हथियारबंद होना आवश्यक था क्योंकि भ्रष्ट और ज़ालिम हाकम श्रेणी प्यार की भाषा समझने से मुनकिर हो चुकी थी। इन सब हालातों को मुख्य रखते हुए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने गुरतागद्दी पर विराजमान होते समय ही बादशाही चिन्हों को धारण किया था। समकालीन हकूमत ने इसको प्रत्यक्ष चनौती ही समझा भाई गुरदास जी समय के अनुसार किए गए बाहरी परिवर्तन को कुछ उदाहरणों द्वारा समझाते है कि जैसे खेती की सुरक्षा हेतु झाड़ियों की बाड़ की जाती है, बाग की सुरक्षा हेतु किकरे बोयी जाती है। चंदन की बहुमूल्य लकड़ी की सुरक्षा हेतु ईश्वर ने उसके इर्द-गिर्द सांपों का पहरा लगाया है। घर की सुरक्षा हेतु दरवाज़ा, ताला, कुत्ता तथा पहरेदार रखे जाते है। इस तरह धर्म की सुरक्षा हेतु बाहु बल तथा राजकीय शक्ति की ज़रूरत है :

खेती वाड़ि सु ढिंगरी किकर आस पास जिउ बागै।
सप पलेटे चंनणै बूहे जंदा कुता जागै। *(वार २६:२५)*

कुछ अन्य उदाहरणों द्वारा भी भाई गुरदास जी स्पष्ट करते हैं कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने गुरु-सिद्धांत, समय और स्थिति अनुसार कार्य कीये। जैसे सांप से मणी प्राप्त करने, हिरन से कसतूरी प्राप्त करने के लिए उसको मारना पड़ता है, तिलों से तेल निकालने के लिए उनको कोहलू में पीसना पड़ता है, नारियल की गिरी प्राप्त करने के लिए उसको तोड़ना पड़ता है। इसी तरह धर्म को दुष्कर्मियों तथा राजशक्ति के जुल्म से बचाने हेतु बाहु बल की जरूरत होती है। भाई गुरदास जी फरमाण करते है कि :

जियो मणि काले सप सिरि हसि देइ न जाणी।
जाण कथूरी मिरग तनि मरि मुकै आणी।
तेल तिलहु किउ निकलै विणु पीड़े घाणी।
जिउ मुहु भंने गरी दे नलीउरु निसाणी।
बेमुख लोहा साधीऐ वगदी वादाणी। *(वार ३४:१३)*

गुरमति अनुसार आत्मिक स्वतंत्रता को सामाजिक स्वतंत्रता से अलग नहीं किया जा सकता। यह विचारधारा मीरी-पीरी, देग-तेग, हलत-पलत, राज-योग की लखायक है, इसलिए यह विचारधारा लोगों के दिलों में राज करती है। 

श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना

*-डॉ. बलवंत सिंघ**

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का समय सिक्ख इतिहास में धर्म एवं राजनीति के सुमेल के लिए प्रसिद्ध है। जब भी कोई विद्वान सिक्ख पंथ की धार्मिक एवं राजनीतिक ज़िंदगी पर विचार करता है तो सहज ही उसका ध्यान श्री अकाल तख़्त तथा इससे सम्बंधित मीरी-पीरी के सिद्धांत की तरफ खींचा जाता है। वास्तव में श्री अकाल तख़्त साहिब पर मीरी-पीरी के सिद्धांत ने सिक्ख पंथ के इतिहास पर ऐसी अमिट छाप छोड़ी है कि इनका परस्पर अटूट रिश्ता कायम हो गया है तथा इनको एक-दूसरे से अलग करके विचार करना असंभव-सा लगता है। श्री अकाल तख़्त साहिब तथा मीरी-पीरी के सिद्धांत ने सिक्ख पंथ के राजनीतिक दृष्टिकोण को निर्धारित करने में हमेशा ही बहुत अहम भूमिका निभाई है। आज भी सिक्ख पंथ की राजनीति तथा इसके राज्य से सम्बंधों को समझने के लिए मीरी-पीरी एक मूल सिद्धांत है तथा इसमें श्री अकाल तख़्त साहिब की भूमिका एवं योगदान को नज़रंदाज नहीं किया जा सकता।

श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा सिक्ख पंथ के धार्मिक तथा राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष की प्रतीक है। इसकी स्थापना से सिक्ख पंथ की सैनिक जत्थेबंदी अस्तित्व में आई, जिसने मुगल सरकार की धार्मिक कट्टरता एवं ज़ुल्म से सिक्ख पंथ को बनती सुरक्षा प्रदान ही नहीं की बल्कि इसको राजनीतिक शक्ति में गठित करने में भी योगदान डाला। सिक्ख इतिहास के अनुसार सिक्ख पंथ को सैनिक रूप में जत्थेबंद करने का फैसला श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री गुरु अरजन साहिब की नसीहत के अनुसार ही किया था। श्री गुरु अरजन साहिब ने सिक्ख पंथ के विकास की पूर्वगामी मंज़िल को अनुभव करते हुए भाई सीगारू तथा भाई जैता जी जैसे शूरवीर सिक्खों को वचन किया था "अर्सी जो शसतर पकड़ने हैनि, सो गुरू हरिगोबिंद का रूप धार के पकड़ने हैनि। समां कलयुग दा वरतणा है। शसतरों दी विद्या कर मीर की मीरी खींच लेनी है तथा शबद की प्रीत समझ कर पीर की पीरी ले लेनी है।" आप छठी पातशाही के हजूर रहना।" पंचम पातशाह ने अपने शहीदी संदेश में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को यह हिदायत की थी कि :

सायुध होइ तखत पर राजहु।
जथा सकति सैना संग साजहु।

तख़्त रचने तथा सैनिक जत्थेबंदी कायम करने से ये अभिप्राय बिलकुल नहीं था कि पहले सिक्ख गुरु साहिबान के आध्यात्मिक चिंतन को बिलकुल तिलांजलि दे दी जाये। श्री गुरु अरजन साहिब का इस सम्बंध में आदेश था कि :

ब्रिध आदिक सिखनि सनमानहु।
पुरा गुरनि की रीति परमानहु।
नई रीत इक रण की कीजहि।
अपर प्रथम सम गती चलीजहि।

गुरु साहिबान की बाणी में ऐसे अनेकों प्रमाण प्राप्त हैं जिनसे उनके राजनीतिक विचारों तथा समकालीन शासन के बारे में दृष्टिकोण की काफी जानकारी मिलती है। श्री गुरु नानक साहिब तथा श्री गुरु अमरदास जी ने उत्तराधिकारी की 'योग्यता' को ही असली मापदंड माना। श्री गुरु नानक साहिब ने हाकिम श्रेणी को दैवी कद्रों-कीमतों को ग्रहण करने का उपदेश दिया। सिक्ख

**श्री गुरु ग्रंथ साहिब अध्ययन केंद्र, गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी श्री अमृतसर, फोन : ९८५५०५७६२४*

गुरु साहिब ने शासक वर्ग से प्रजा के प्रति सद्‌भावना, नेकी तथा न्याय की अभिलाषा करते हुए समकालीन राज्य-व्यवस्था में से रिश्वतखोरी, शोषण तथा बेइन्साफी को खत्म करने की मांग की। उनके नज़रीए में राज्य अधिकार प्रभु की बख़्शिश है तथा प्रभुसत्ता का सोमा (स्रोत) भी परमात्मा खुद है। राजाओं के दैवी-राज्याधिकार का खंडन करके उनके नेकी एवं सच्चाई के रास्ते के लिए प्रेरित करने के लिए गुरु साहिब ने भारत के प्राचीन इतिहास में से उन राजाओं की कई उदाहरणें उदधृत कीं, जिन्होंने दैवी-राज्याधिकार के प्रति दावा करते हुए दुराचारी व्यावहार अपनाया किंतु अंत में उनको प्रभु की दख़्लंदाजी के कारण राज्याधिकार से वंचित होना पड़ा तथा सज़ाएं भी भुगतनी पड़ीं। इससे यह सिद्ध होता है कि अगर सत्ताधारी वर्ग दुनियावी अभिलाषाओं में खचित होकर नैतिक कद्रों-कीमतों से विहीन हो जाता है तो सिक्ख चिंतन के अनुसार उससे राज्य सत्ता का अधिकार छिन जाता है। दूसरे शब्दों में राज्य सत्ता मानवता के कल्याण के लिए है न कि इसके विनाश के लिए। इसलिए अगर शासक अपने फर्ज़ की पालना में निष्फल सिद्ध होता है तो वह परमात्मा द्वारा बख़्शे राज्याधिकार को गंवा लेता है। ऐसी स्थिति में सही सोच तथा दैवी-आवेश प्राप्त व्यक्ति मानवता के भले के लिए शासक वर्ग को चुनौती देने तथा राज्य-सत्ता से अलविदा करने का अधिकार रखते हैं। एक किस्म से ऐसे शासन के विरुद्ध संघर्ष करना नैतिक प्रजा का अधिकार नहीं बल्कि दैवी फर्ज़ भी है। इस तरह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का श्री अकाल तख़्त साहिब की सृजना द्वारा बादशाह जहांगीर के पक्षपाती तथा ज़ालिमाना व्यवहार को चुनौती देना सिक्ख चिंतन के बिलकुल अनुकूल था। हिंदोस्तान पर बाबर के हमले के समय आम लोगों को, खास तौर पर औरतों को मुगल सैनिकों के हाथों से बड़े दुख तथा बेपति सहन करनी पड़ी। शासक वर्ग का प्रजा को विदेशी हमलावरों से सुरक्षा प्रदान करना एक पावन फर्ज़ है। इसी कारण श्री गुरु नानक साहिब ने मुगल हमले के दौरान लोगों के दुख-दर्द तथा देश की बर्बादी का लोधी शासन को जिम्मेवार ठहराया। उन्होंने बाबर की भी बड़ी निंदा की क्योंकि उसके सैनिकों ने भोले-भाले, निआसरे तथा शस्त्रहीन लोगों पर कहर का जुल्म करके अमानवीय व्यवहार का सबूत दिया था। श्री गुरु नानक साहिब के समकालीन शासकों की भूमिका की निंदा यह दर्शाती है कि वे शासक वर्ग के अनुचित व्यवहार की नुक्ताचीनी तथा इसके बारे अपनी राय व्यक्त करने के अधिकार से कभी भी दस्त-बर्दार नहीं थे हुए। असल में अत्याचारी शासन के प्रति नागरिकों के दृष्टिकोण तथा इसके विरुद्ध आवाज़ बुलंद करने के अधिकार को निश्चित दिशा प्रदान कर दी थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख़्त साहिब के रूप में ऐसी संस्था स्थापित की, जहां किसी राज्य की नीतियों पर विचार-विमर्श करने के उपरांत सिक्ख पंथ के उसके प्रति रवैये को कोई दिशा-निर्देश दिया जा सके।

सिक्ख गुरु साहिबान लोगों के शासक वर्ग के प्रति खुशामदी तथा गैर-जिम्मेवाराना व्यावहार से भी चिंतातुर थे। वे प्रजा को अपने अधिकारों तथा फर्ज़ों के प्रति जागृत करने के इच्छुक थे। इस सम्बंध में श्री गुरु नानक साहिब का विचार है कि अगर प्रजा राजे की मांगों को प्रवान करती है तो उसका शासक से प्राकृतिक तथा नियमित सम्बंध स्थापित हो जाता है। दूसरी तरफ गुरु साहिब प्रजा के अनुचित व्यवहार के बारे फिक्रमंद थे क्योंकि लोग अज्ञानता के कारण हाकिम श्रेणी की कई नजायज़ मांगे मानने के अलावा रिश्वतें भी देते थे। गुरु साहिब ने जनता को अपमान की बजाय स्वाभिमान का जीवन जीने का उपदेश दिया। उन्होंने ऊंचे आदर्श के लिए जीवन न्यौछावर करने को शोभनीय कारनामा बताया। प्रजा को कायरता त्यागकर निडर होने तथा सत्य को सत्य कहने की

ज़रूरत पर बल दिया। ऐसे विचारों ने प्रजा को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने तथा ऊंचे आदर्शों की प्राप्ति के लिए पहल-कदमी को ख़तरा समझकर झिझक को छोड़ने की प्रेरणा दी। श्री गुरु नानक साहिब ने इन विचारों में भ्रष्ट तथा नैतिक कद्रों-कीमतों से विहीन राजनीति के विरुद्ध बगावत एवं ज़ालिम तथा लोग-विरोधी शासन के विरुद्ध स्व-रक्षा हेतु संघर्ष के बीज विद्यमान थे। ऐसे बीज की उपज थी श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना। जिसने लोगों को अपने अधिकारों के प्रति चेतन होने तथा इनकी रखवाली करने के लिए उत्साह दिया।

मीरी-पीरी के सिद्धांत को अमल में लाने के लिए इसको संस्थाई आधार प्रदान करना अति आवश्यक था। श्री गुरु हरिगोबिंद जी द्वारा श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना इस दिशा में बहुत ही उल्लेखनीय एवं महत्त्वपूर्ण कार्य था। सिक्ख रिवायत अनुसार श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के उपरांत श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की गुरिआई के लिए दसतारबंदी की रस्म हुई, जिसमें श्री अमृतसर शहर के पंचों के अलावा मुख्य मसंद भी शामिल हुए। इस मौके पर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गुरिआई की परंपरागत वस्तुओं को तोषेखाने भेजने के हुक्म देते हुए मीरी-पीरी की प्रतीक दो कृपाणें धारण कर लीं। मुगल सरकार के विरोधी रवैये के कारण श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब सिक्ख पंथ को सुरक्षा प्रदान करने की अपनी जिम्मेवारी से भलीभांति वाकिफ़ थे। फलत: श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी-पीरी के सिद्धांत को अमल में लाने तथा सिक्ख पंथ के सांसारिक नेता के रूप में अपनी भूमिका निभाने के लिए श्री अमृतसर में श्री हरिमंदिर साहिब के समक्ष श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना का महान उद्यम किया।

श्री अकाल तख़्त अपने मौलिक रूप में बादशाहों के तख़्त के समान साधारण किंतु ऊंचा सिंहासन होगा, जो बाद में सिक्ख पंथ के दुनियावी प्रभुता के सोमे (स्रोत) तथा प्रतीक के तौर पर उभरकर सामने आया। श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना के बाद सबसे उल्लेखनीय तथ्य यह है कि यह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के दृढ़ विश्वास को प्रकट करता है कि उनकी प्रथम वफ़ादारी अकाल पुरख के लिए है न कि मुगल बादशाह या दुनिया के किसी अन्य ताज या तख़्त से। फलस्वरूप सिक्खों के लिए भी यह प्रश्न था कि वे मुगल राज्य या श्री अकाल तख़्त साहिब के प्रति वफ़ादारी में से किन्हीं एक का चुनाव करें। यहां यह उल्लेख करना भी अति आवश्यक है कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा स्थापित संस्थाओं पर प्रचलित की गईं रिवायतें महिज़ एक इत्तफाकीया घटना या ऐतिहासिक मज़बूरी का परिणाम नहीं था बल्कि इनकी स्थापना के लिए प्रेरणास्रोत दैवी आवेश था।

सिक्ख रिवायत के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की तख़्त नशीनी के मौके उनके शाही पोशाक के साथ दसतार पर कलगी भी सजाई हुई थी, अन्य रिवायती हथियारों के अलावा मीरी-पीरी की दो कृपाणें भी पहनी हुई थीं। जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब सिक्ख पंथ के सांसारिक नेता की भूमिका निभाने के लिए पूरे राजसी ठाठ-बाठ सहित श्री अकाल तख़्त साहिब पर सुशोभित हुए तो भट्टों एवं ढाडियों ने उनकी स्तुति (महिमा) में वारें गायन की।

गुरु साहिब अपने नित्य-कर्म के अनुसार स्नान करने के उपरांत भजन-बंदगी में लीन हो जाते, सुबह होने पर श्री हरिमंदर साहिब में कीर्तन का आनंद लेते, धार्मिक कार्यों से फुर्सत पाकर संगत को दर्शन देने के लिए श्री अकाल तख़्त साहिब पर दरबार लगाया जाता। देशों-विदेशों से गुरु-दरबार में आने वाली संगत भी इस दीवान में शामिल होती। मुख्य मसंद अपनी संगत सहित दसवंध तथा सेवा भी इसी दीवान में भेंट करते थे। सिक्ख संगत के सामूहिक एवं निजी,

धार्मिक एवं सांसारिक मामलों के बारे में विचारें भी होतीं। श्री अकाल तख़्त पर सजे दीवान में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब सिक्खों के निजी तथा पंथक मामलों पर अपने फैसले सुनाते थे। उन्होंने सिक्खों को अपने आपसी झगड़े श्री अकाल तख़्त साहिब पर पेश होकर निपटाने की प्रेरणा दी। अपने रोज़ाना जीवन में श्री अकाल तख़्त साहिब तथा श्री हरिमंदर साहिब की महत्ता को उन्होंने इस प्रकार बयान किया :

शांत रूप हवै मै रहो हरिमंदर के माहि।
रजो रूप इह ठां रहे अकाल तखत सुख पाइ।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख़्त साहिब मीरी-पीरी की मर्यादा बांधने तथा इसकी निगरानी करने के लिए गुरबाणी के सुप्रसिद्ध विद्वान भाई गुरदास जी को जिम्मेवारी सौंपी। एक किस्म से भाई गुरदास जी श्री अकाल तख़्त साहिब के पहले जत्थेदार के रूप में नियुक्त हुए। उनका इस पद पर सुशोभित होना श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की दुरंदेशी को दर्शाता है क्योंकि सिक्ख पंथ में राजनीति तथा धर्म का सुमेल एवं शक्ति के प्रयोग के बारे में उठी शंकाओं को, सिक्ख ब्रह्म विद्या के सूक्षम भेदों से अवगत व्यक्ति ही निवृत कर सकता था।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्खों में वीर रस पैदा करने के लिए श्री अकाल तख़्त साहिब पर योद्धाओं की बहादुरी के कारनामों से भरपूर, बदी तथा बेइन्साफी के विरुद्ध संघर्ष को प्रकट करती वारें गाने की प्रथा चलाई। इस कार्य के लिए भाई अब्दुल्ला तथा भाई नत्था मल्ल ढाडियों की सेवाएं गुरु-दरबार के लिए प्राप्त की गईं। जोशीली वारें गाने से श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी उपरांत भयभीत तथा निराश हुए सिक्खों में नया जोश एवं उत्साह पैदा होना आरंभ हुआ। उनको एहसास होने लगा कि धार्मिक फर्ज़ अदा करने के अतिरिक्त उन्होंने ने बदी के विरुद्ध संघर्ष में नैतिक जिम्मेवारियां भी निभानी हैं। इस प्रकार श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण व इसकी परंपराओं ने सिक्ख-पंथ के आत्म-विश्वास को मुड़ बहाल करने के लिए बड़ी अहम भूमिका निभाई। उल्लेखनीय है कि संकटकालीन स्थिति में सिक्ख पंथ के मनोबल को निर्माणित करने में श्री अकाल तख़्त साहिब सदैव ही प्रमुख प्रेरणास्रोत के रूप में भूमिका निभाता है।

मीरी-पीरी की नीति के अनुसार सिक्ख पंथ को सैनिक शक्ति में जत्थेबंद करना आवश्यक था तथा इस उद्देश्य के लिए सैनिक साधनों की आवश्यकता थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख़्त साहिब से देशों-विदेशों की सिक्ख संगत को हुकमनामें जारी किए कि गुरु दरबार में धन की जगह शस्त्र एवं घोड़े भेंट किए जायें। हुक्म हुआ कि जो सिक्ख बढ़िया हथियार एवं उत्तम नसल के घोड़े लेकर आएगा वह गुरु की कृपा का विशेष पात्र होगा। सिक्ख पंथ श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी को अपने धर्म में दख़लांदाज़ी एवं बेइन्साफी समझता था। सिक्खों ने यह महसूस कर लिया था कि मुगल सरकार के जुल्म तथा अत्याचार से स्वरक्षा तथा बेइन्साफी के विरुद्ध संघर्ष के लिए सैनिक साधनों का प्रयोग जायज़ है। फलस्वरूप सिक्खों ने मुगलों से सुरक्षा की उम्मीद छोड़कर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पर विश्वास प्रकट करते हुए सिक्ख पंथ को सैनिक पक्ष से स्व-निर्भर बनाने के लिए अपनी सेवाएं अर्पण करनी शुरू कर दी। कुछ दिनों में ही माझे, मालवे एवं दुआबे में से ४०० शूरवीर सिक्ख श्री अकाल तख़्त साहिब पर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पास हाज़िर हो गए। जंगी साज़ों-सामान भी साथ-साथ इक्ट्ठा होना शुरू हो गया। गुरु साहिब ने सिक्ख सैनिकों को सौ-सौ के जत्थों में संगठित कर प्रत्येक पर एक-एक जत्थेदार नियुक्त कर दिया। सिक्ख सैनिकों को गुरु साहिब द्वारा एक-एक घोड़ा तथा हथियार बख़्शिश किया गया। इस तरह सिक्ख पंथ का मौलिक सैनिक प्रबंध श्री

अकाल तख़्त साहिब पर अस्तित्व में आया।

श्री अकाल तख़्त साहिब पर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के पास बादशाहों की तरह ५२ अंग-रक्षकों की एक सैनिक टुकड़ी सेवा में हमेशा सावधान रहती थी। 'दविसतानि-मज़ाहिब' के लेखक के अनुसार-- "श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की फौज में उस समय ८०० घोड़े, ३०० घुड़सवार तथा ६० तोपची थे। गुरु साहिब ने अपनी सैनिक शक्ति को संगठित करने के लिए धार्मिक पक्षपात से ऊपर उठकर मुस्लिम सैनिक को भी अपनी सेना में भर्ती किया। जो भी कोई मुगल किसी अन्य जगह से निकाला जाता था, वह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पास आकर पनाह ले लेता था, तथाकथित दलित वर्ग से सम्बंधित सिक्ख जिनको हाकिम श्रेणी गंवार समझकर सैनिक पेशे के योग्य नहीं थी समझती, वे सिक्ख सेना में शामिल होने लगे।" मुख्य रूप में सिक्खों ने धार्मिक जज़्बे अधीन स्वइच्छा के अनुसार बिना किसी निष्काम के सैनिक सेवाएं अर्पण की थीं किंतु मुस्लिम तथा पठान सैनिकों को तनख़्वाह पर भर्ती किया गया था। सैनिक पक्ष से श्री अमृतसर की हिफ़ाजत के लिए लोहगढ़ किले के निर्माण के प्रबंध किए गए।

सैनिक साधन प्रदान करने के अलावा सिक्खों के लिए मानसिक तौर पर सैनिक संघर्ष में शामिल होने जंगजू स्वभाव तथा सैनिक सिखलाई के अवसर पैदा करने की भी आवश्यकता थी। इसी उद्देश्य के लिए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख़्त साहिब पर जंगी खेलों के कौतुक दिखाने की प्रथा चलाई। धार्मिक कार्यों से निपटकर शिकार खेलना शुरू किया। इस उद्देश्य के लिए अच्छी नसल के घोड़े, कुत्ते तथा बाज़ पालने आरंभ किए। जंगी खेलों एवं शिकार की परिपाटी ने सिक्खों को शारीरिक रूप में हृष्ट-पुष्ट बनाने के अलावा जंगी मश्कों तथा सैनिक सिखलाई का माहौल पैदा किया। इन रिवायतों से भारतीय समाज पर अहिंसा के अंध-विश्वास कारण पड़े बुरे प्रभाव को दूर करके सिक्खों में आत्म-विश्वास पैदा करके जुझारू भावना पैदा करनी आसान हो गई।

श्री अकाल तख़्त साहिब पर मीरी-पीरी के सिद्धांत के अनुसार आरंभ की गई मर्यादा से सिक्खों को यह यकीन हो गया कि उन्होंने सिक्ख पंथ को मुगल सरकार के जुल्म से बचाने के लिए सैनिक सेवाएं भी धार्मिक फर्ज़ के रूप में अदा करनी है। धीरे-धीरे सिक्खों में स्वरक्षा हेतु सैनिक संघर्ष की भावना उत्पन्न हो गई। फलत: श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पास मुगल सरकार के साथ टक्कर लेने के लिए सैनिक जत्थेबंदी कायम हो गई। असल में श्री अकाल तख़्त साहिब के समूचे माहौल ने सिक्ख पंथ में वीरता तथा स्वाभिमान की ललक प्रचलित कर दी थी। इस समय सिक्ख पंथ में पैदा हुई वीरता का उद्देश्य किसी को मारना या कत्ल करना नहीं था बल्कि खुशी-खुशी अपना आप कुर्बान करना था। सिक्ख पंथ के धर्मिक-सामाजिक जीवन में से ऐसी नयी सामाजिक प्रणाली अस्तित्व में आई जिसका मंतव्य राज्य स्थापित करने का लालच नहीं था बल्कि अपने प्यारे (गुरु) के लिए मर मिटने की पावन भावना थी।

नि:संदेह सिक्खों ने अपने धर्म की पवित्रता तथा रखवाली के लिए इतिहास में बहादुरी के दिल दहला देने वाले कई लासानी कारनामे कर दिखाए हैं। असल में सिक्ख-पंथ में बहादुरी एवं कुर्बानी की रिवायतें स्थापित करने में श्री अकाल तख़्त साहिब का बड़ा अहम योगदान रहा है। सिक्ख पंथ में बदी तथा बेइन्साफी के विरुद्ध सैनिक संघर्ष की जायज़ करारी श्री अकाल तख़्त साहिब के फलसफे में से ही ढूंढी जा सकती है। सिक्ख पंथ के सैनिक प्रबंध का इतिहास भी श्री अकाल तख़्त साहिब से बड़ा गहरा सम्बंध रखता है क्योंकि ये संस्था हमेशा ही सिक्ख सैनिकों के लिए बहुत बड़ी प्रेरणास्रोत रही है।

(अनुवादक-- गुरप्रीत सिंघ भोमा)



अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी

*-डॉ. कुलदीप सिंघ हउरा**

सिक्ख धर्म के महान विद्वान एवं दार्शनिक भाई गुरदास जी ने पहली वार की अड़तालीसवीं पउड़ी में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बारे में लिखा है :

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलि भंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।

'पंजि पिआले' से तात्पर्य है-- पांच शुभ गुण-- सत्य, संतोष, दया, धैर्य एवं धर्म। 'पंजि पीर' के अर्थ हैं-- श्री गुरु नानक साहिब से लेकर श्री गुरु अरजन साहिब तक हुईं पांच पातशाहियां।

'दलि भंजन', 'गुरु सूरमा', 'वड जोधा', 'बहु परउपकारी' श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की विशेषताओं के प्रतीक हैं।

"अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी" से तात्पर्य है कि श्री गुरु अरजन साहिब तथा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के शरीरों में ही अंतर था, ज्योति एक ही थी। ज्योति अर्थात् आत्मा सदैव सजीव रहती है, नाशवान तो शरीर है। सिक्ख गुरु साहिबान दस जामों में संसार का उद्धार करने हेतु समय-समय पर आए किंतु उनमें ज्योति एक ही थी। श्री गुरु नानक साहिब की ज्योति ने भाई लहिणा जी में प्रवेश कर उनको श्री गुरु अंगद साहिब बना दिया था। उसी प्रकार आगे श्री गुरु अंगद साहिब ने अपनी ज्योति श्री गुरु अमरदास जी में प्रवेश कर दी तथा अंतिम *"जोति ओहा जुगति साई सहि काइआ फेरि पलटीऐ"* के अनुसार श्री गुरु नानक साहिब की ज्योति श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी में आ विराजमान हुई तथा 'गुरु नानक-ज्योति गोबिंद रूप' कहलाई। ये विचार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'बचित्र नाटक' में इस तरह प्रकट किए हैं :

नानक अंगद को बपु धरा ॥
धरम प्रचुरि इह जग मो करा ॥
अमर दास पुनि नामु कहायो ॥
जनु दीपक ते दीप जगायो ७॥
अमर दास रामदास कहायो ॥
साधन लखा मूढ़ नहि पायो ॥९॥
रामदास हरि सो मिलि गए ॥
गुरता देत अरजुनहि भए ॥
जब अरजुन प्रभ लोकि सिधाए ॥
हरि गोबिंद तिहठां ठहराए ॥

इस कथन के अनुसार मात्र नाम ही बदलते रहे, शरीरों में आत्मा वही प्रचलित रही। इसी विचार को भाई गुरदास जी ने २४वीं वार में बहुत विस्तार से प्रस्तुत करके निर्णायक परिणाम निकाला है। आप ५वीं पउड़ी में गुरु एवं चेले के प्रेम का वर्णन करते हुए फरमान करते हैं कि गुरु, चेला तथा चेला, गुरु हो गया है अर्थात् भाई लहिणा जी श्री गुरु अंगद देव जी बन गए और श्री गुरु नानक साहिब ने चेले की तरह उनके चरणों में शीश झुकाया :

गुर चेला चेला गुरू गुरु चेले परचा परचाइआ ॥
(वार २४:५)

आगे ८वीं पउड़ी में और स्पष्ट करते हुए लिखा है :

गुरु अंगदु गुरु अंगु ते अंम्रित बिरखु अंम्रित फल फलिआ।

१४वीं पउड़ी में इसी विचार को आगे चलाते हुए लिखा है :

गुरु अमरहु गुरु रामदासु जोती जोति जगाइ जुहारा।
सबद सुरति गुरु सिखु होइ अनहद बाणी निझर धारा।
तखतु बखतु परगटु पाहारा ॥

२५वीं पउड़ी में भाई साहिब गुरमति का महान सिद्धांत स्पष्ट करते हुए बताते हैं कि वास्तविक गुरु तो 'गुर शबद' ही है।

गुरु शरीर का नहीं, ज्योति का, शबद प्रकाश का नाम है। जिस शबद का प्रचार श्री गुरु नानक साहिब के समय से चल रहा था, उसी शबद का प्रचार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने जीवन-काल में किया। जो शबद श्री गुरु नानक साहिब ने साधसंगत में बांटा उसी शबद और शबद का जाप करने वाली संगत की रक्षा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने की। आप जी ने दो कृपाणें पहनीं-- एक मीरी की और एक पीरी की। पीरी की कृपाण क्या थी-- गुर-शबद ही तो थी।

आम तौर पर योद्धा, वीर, बहादुर परोपकारी नहीं होते परंतु छठम् पीर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब एक साथ ही योद्धा तथा परोपकारी थे। जब आपके द्वारा पाला हुआ पठान पैंदे खां लालच तथा अहंकार में आकर उनसे मुकाबले के लिए ही खड़ा हुआ तो बड़े योद्धा, परोपकारी गुरु ने पहले उसी को वार करने के लिए कहा। जब पैंदे खां तीन बार वार करके भी गुरु साहिब का कुछ न बिगाड़ सका तो योद्धा परोपकारी गुरु द्वारा किए वार से वह बेहोश होकर गिर पड़ा। गुरु जी घोड़े से उतरकर नीचे आए और कहा, "पैंदे खां! पढ़ कलमा, तेरा अंतिम समय आ गया है।" साथ ही उसको ढाल से छांव की। 'तवारीख खालसा' में लिखा मिलता है :

जब गिरन लाग कहि गुर उदार।
तब तुरक जनम कलमा उचार।

तो पैंदे खां थिरकते हुए लफ़्जों में कहने लगा, "सतिगुरु तेरी मेहर ही मेरा कलमा है।"

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की कृपाण धर्म की रक्षा के लिए थी, किसी जातीय लाभ के लिए नहीं। वे आध्यात्मिकता के भंडार थे। आप जी ने चाहे गुरबाणी उचारण नहीं की किंतु जब भी उपदेश करते, गुरबाणी पढ़कर सुनाते और गुरबाणी में से ही हवाले देते। आप जी को चाहे साम्राज्यशाही के लिए चार जंगें लड़नी पड़ीं परंतु आप जी ने प्रचार के कार्यों को कभी ढीला न होने दिया। उन्होंने अपने बड़े पुत्र बाबा गुरदित्ता जी को निरोल (सिक्ख धर्म के) प्रचार में ही लगा रखा था। कीरतपुर साहिब पहुंचकर आप जी ने देश के अलग-अलग हिस्सों में प्रचारक भेजने के लिए चार धूणीआं (प्रचार-केंद्र) नियत कीं। बाबा हसना, बाबा गोंदा तथा बाबा अलमसत ने आपके कहने के अनुसार प्रशंसायोग्य ढंग से प्रचार किया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने भी उन्हीं आदर्शों का ही प्रचार किया जो उनसे पहले हुए पांच गुरु साहिबान ने किया था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी एवं पीरी की दो कृपाणें पहनकर अपने लिए कोई इलाके नहीं छीने, अपनी कोई निजी जायदाद नहीं बनाई, मात्र लोगों को जुल्म का मुकाबला करने की रीति सिखलाई, उनके भीतर स्वाभिमान की भावना जगाई। लड़ाइयां भी उन्होंने तब लड़ीं जब उन

पर जबरदस्ती जंग करने के लिए माहौल बना दिया गया। उन्होंने शूरवीर योद्धाओं की तरह डटकर मुकाबला किया तथा चारों ही लड़ाइयां जीतकर संसार को यह दिखा दिया कि जाति एवं कौमी गैरत के लिए अगर मुश्किलों से जूझना पड़े तो डटकर मुकाबला करना ही उचित है। आप जी की तेग मात्र शक्ति का चिन्ह ही नहीं, भक्ति का भी प्रतीक थी। इससे उन्होंने श्री गुरु नानक साहिब के दिखाये रास्ते को ही मूर्तिमान किया। धर्म की रक्षा के लिए जो बीज श्री गुरु नानक साहिब ने बोया था, वह अब फल-फूलकर वृक्ष बन चुका था, जो दीनों, कमज़ोरों, प्रताड़ित हुए लोगों को अपनी छांव तले पनाह देने योग्य हो गया था। श्री गुरु नानक साहिब ने बाबर को जाबिर कहने की दिलेरी की थी; उसकी फौज को 'पाप की जंञ' (बारात) कहने का साहस किया था; उसको जोरी (जबरदस्ती) दान मांगने वाला 'जरवाणा' (लुटेरा) कहने की जुर्रत की थी। उसको हिंदोस्तान पर आक्रमण करने वाला 'यम' कहा था। मीरी एवं पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने देशवासियों के अंदर जुल्म के विरुद्ध खड़े होने का साहस पैदा किया, उनको स्वाभिमान की रक्षा के लिए जूझने का ढंग सिखाया तथा जबरदस्ती गले पड़ी लड़ाइयों को मर्दे-मैदान बनकर लड़ा और जीता। उन्होंने वही कार्य किया जो श्री गुरु नानक साहिब ने धर्म द्वारा प्रचारित किया था। उन्होंने 'भक्ति तथा शक्ति' का सुमेल कर देशवासियों के भीतर साहस पैदा किया।

सिक्खी एक सफल जीवन-जाच है, जो बड़ी सफलता से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने जीवन में ढाली। यही कारण है कि मुहसिनफानी के कहे अनुसार, "सत्य के खोजार्थी तथा परमात्मा के रास्ते के पथिक बने ईरान, अरब, तुर्किस्तान तथा हिंदोस्तान के कोने-कोने से आप जी के पास कुशाग्र बुद्धि वाले जीवन-जाच सीखने आते थे।" गुरु साहिब का गुरबाणी के प्रति इतना सत्कार था कि जपु जी साहिब का पाठ शुद्ध सुनाने के बदले भाई गोपाला जी को गुरगद्दी सौंपने के लिए तैयार हो गए।

गुरु साहिब एक महान कौमी निर्माणकर्ता थे। जिन हालातों में उन्होंने गुरगद्दी संभाली वे ऐसे थे कि कोई मामूली व्यक्ति जब्र-जुल्म के सामने खड़ा होने का साहस नहीं कर सकता था। श्री गुरु अरजन साहिब द्वारा अकह एवं असह यातनायें सहते हुए शहादत देने के बाद केवल ग्यारह वर्षों के बाल-गुरु का अपने पांवों पर खड़े होना कोई मामूली घटना नहीं। आप जी ने दो कृपाणें पहनीं; अच्छे शस्त्र तथा अच्छी जवानी की भेंट मांगी; श्री अकाल तख़्त साहिब की रचना की, लोहगढ़ किले का निर्माण करवाया, फौजें रखीं, शस्त्र इकट्ठे किए। आप जी शिकार खेलने जाते, नगाड़े बजाते, फौजी कौतुकों की शिक्षा खुद लेते तथा सिक्खों को दिलाते। ये सब ऐसे काम थे, जिससे कौम में चढ़दी कला का जज़्बा पैदा हो गया। आप जी ने नित्य के प्रोग्राम कुछ इस तरह बनाए कि साधारण लोगों में उत्साह बना रहे। आप ने ढाडियों को जंगी वारें सुनाने की प्रेरणा दी। इनसे प्रेरणा लेकर सिक्ख संगत हज़ारों की संख्या में गुरु-दरबार में हाज़िर होती। गुरु जी की शख़्सियत से प्रभावित होकर जवान अपनी जवानियां भेंट करते। गुरु जी पर विश्वास एवं धैर्य इतना था कि दो वक्त की रोटी तथा ६ महीने बाद एक कुर्ते के अलावा उनकी कभी कोई मांग नहीं होती थी। इस तरह आप जी की चुंबकीय शख़्सियत से कौम का हर वर्ग उनकी तरफ खिंचा चला आने लगा। आप जी

की शख़्सियत का कमाल था कि भाई बिधी चंद जैसा शूरवीर जब तक लड़ाइयां होती रही थीं, गुरु जी की फौज में रहकर लड़ता रहा किंतु जब जंगों का समय टल गया तो गुरु जी ने उसको प्रचारक बनाकर भेज दिया।

गुरु साहिब शस्त्र-विद्या में छोटी उम्र में ही प्रवीण हो गए थे। आप जंगी-नीति में भी निपुण थे। आप जी हर शस्त्र विधिपूर्वक चला सकते थे। आप जी तलवार-ज़नी तथा तीर-अंदाज़ी में माहिर थे। घुड़सवारी में तो आपका कोई सानी नहीं था। आप जी ने फौजों के सिरमौर जरनैल होने के कारण बड़ी सूझबूझ तथा ठंडे स्वभाव से मौके की नज़ाकत को देखते हुए अपनी फौज को योग्य अगुआई दी। पहली लड़ाई के समय घर में बीबी वीरो की शादी की तैयारियां हो रही थीं तो अचानक मुगल फौज ने हल्ला कर दिया। आप जी ने मानसिक संतुलन कायम रखा। आप जी ने सिक्ख फौजों के अगुआ भाई भाना जी को एक बार कहा था कि अपने घर के समीप जंग करना जंग-नीति के अनुकूल नहीं होता, आबादी के पास लड़ने से घर-बार तबाह हो जाते हैं; साधारण जनसंख्या का नुकसान हो जाता है; अंधेरा हो जाने पर अपने ही आदमी मारे जाते हैं। आप जी ने फौजी जरनैल होते हुए भी नैतिकता, सद्भावना तथा आचरण की उच्चता को सदा कायम रखा। ये गुण न तो उन्होंने खुद त्यागे और न ही अपने सिक्खों को त्यागने दिए। गुरु साहिब सदा कहा करते थे कि लड़ाई के मैदान में गिरे हुए, शस्त्रहीन, बालक, वृद्ध, स्त्री, रोगी तथा शरण में आये हुए पर कभी वार न करो। ऐसा करने से सब तेज-प्रताप नष्ट हो जायेगा।

भाई गुरदास जी के कहे अनुसार गुरु साहिब 'बहु परउपकारी' थे। सब्र, संतोष, सहनशीलता, संयम तथा सद्भावना उनके प्रमुख गुण थे। आप प्रत्येक जाति, धर्म, व्यक्ति से प्यार करते थे। किसी से ईर्ष्या, जलन, दुश्मनी उन्होंने कभी नहीं की थी। वे जाहर (बाहरी) तथा बातन (अंदरूनी) एक जैसे थे। वे सब धर्मों का सत्कार करते थे। उनकी धार्मिक सोच कभी भी संकीर्ण नहीं हुई थी। उन्होंने कभी भी कट्टरता तथा पृथक करने की भावना नहीं रखी थी। उन्होंने श्री हरिगोबिंदपुर में मुसलमानों के लिए खास तौर पर मस्जिद बनवाई। उनके अंदर पराई पीड़ा सहने का कितना महान गुण था, उसका पता उनके ग्वालियर के किले में कैदी राजाओं की सहायता करने पर, उनको मुक्त कराने वाली घटना से लगता है। इस घटना के कारण आपको 'बंदी छोड़ दाता' के नाम से भी जाना जाता है। आप सदा फरमाया करते थे, "गरीब का मुंह गुरु की गोलक" अर्थात् गरीब, भूखे तथा जरूरतमंद के मुंह में कुछ डालना गुरु को भेंट चढ़ाने के तुल्य है।

श्री गुरु अरजन साहिब ने 'नाम' की फसल की संभाल के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सृजना की तथा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने इस महान ग्रंथ की रक्षार्थ हेतु खड़ग-भुजा का प्रयोग किया। इसी तरह पहले पांच गुरु साहिबान ने जिस 'नाम भंडार' को एकत्र किया था, छठम् गुरु जी ने उसको खाने तथा भोगने के लिए रास्ता साजगार किया। भाई गुरदास जी लिखते हैं :

गुरु अंगदु गुरु अंग ते गंगहु जाणु तरंग उठाइआ।
अमरदासु गुरु अंगदहु जोति सरूप चलतु वरताइआ।
गुरु अमरहु गुरु रामदासु अनहद नादहु सबदु सुणाइआ।
रामदासहु अरजनु गुरू दरसनु दरपनि विचि दिखाइआ।
गुर मूरति गुर सबदु है साधसंगति विचि परगटी आइआ। (वार २४:२५)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की प्रचार-यात्राएं

*-प्रिं. सुरजीत सिंघ**

श्री गुरु नानक साहिब ने जन साधारण का उद्धार करने, जन उत्थान करने के लिए, जन साधारण की पुकार सुनकर अत्यंत कठिनाइयों के बावजूद भी लंबी प्रचार-यात्राएं कीं। इसके दौरान उन्होंने भारत के अतिरिक्त अन्य एशियाई देशों में भी प्रचार-यात्राएं कीं। एक अनुमान के अनुसार उन्होंने अपनी आयु के लगभग तीस वर्ष प्रचार-यात्रायों में व्यतीत किए तथा हिंदू, मुसलमान, जैनी, बोद्धी, सूफी हर प्रकार और हर नसलों के आगुओं एवं बुद्धिजीवियों के साथ भेंट कर उनको अपनी विचारधारा से परिचित करवाया।

श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी एवं श्री गुरु अरजन देव जी ने भी पंजाब में प्रचार-यात्राएं कीं। श्री गुरु अमरदास जी प्रचार के लिए पंजाब से बाहर हरिद्वार तक गए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी, श्री गुरु नानक देव जी के बाद पहले गुरु थे, जिन्होंने दूर-दूरस्थ पंजाब की सीमा से बाहर उत्तर प्रदेश व कश्मीर के क्षेत्रों में जाकर अपना पैगाम दिया। इतिहासकारों की समझ के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के इस क्रम के पीछे कई महत्त्वपूर्ण तथ्य कार्य कर रहे थे। पहले, उन्होंने समझ लिया था कि उनकी तरफ से शरेआम मीरी-पीरी की कृपाणें धारण करना यदि गुरु नानक साहिब के मिशन का एक ज़ोरदार प्रदर्शन है परंतु इस कदम के रहस्य को समझाना बहुत आवश्यक है, वरन् यह संभावना है कि आम सिक्ख भ्रम में पड़ जाएं तथा गैर सिक्ख इसके महत्त्व को वर्तमान एवं भविष्यत परिप्रेक्ष्यों में न समझ सकें।

गुरु जी ने श्री अमृतसर से अपना प्रचार आरंभ किया। आप जी श्री अमृतसर से करतारपुर पहुंचे। करतारपुर के पास बड़ा मीर के लोग गुरु साहिब के दर्शनों हेतु आए। उनमें से ज्यादातर मुस्लिम थे अथवा वो लोग सखी सरवर के अनुयायी थे। गुरु साहिब के उपदेशों को सुनकर वे लोग बहुत प्रभावित हुए। उनमें से कुछ नवयुवकों ने गुरु साहिब की दुष्ट भंजन फौज में भर्ती होना ही मुनासिब समझा। गांव आलमपुर के लोग भी गुर-उपदेश सुनने के लिए आए एवं गुरु साहिब के मुरीद बन गए। इसी गांव के ज़मीदार फ़तहि खां पठान की विधवा पत्नी अपने पुत्र पैंदे खां को गुरु जी के पास आशीर्वाद के लिए लेकर आई, गुरु जी ने बालक (पैंदे खां) को प्यार किया और उसकी मां को कहा, आज से इस बालक की परवरिश वो अपनी देख-रेख में करवाएंगे। कुछ समय बाद यह बालक बहुत बलवान तथा निपुण जरनैल बन गया। उसने गुरु साहिब तथा मुगल सरकार के बीच युद्धों के दौरान महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई परंतु अंत में उसमें अहं भाव आ गया और गुरु साहिब को ही चुनौती देने लग गया। गुरु साहिब ने आखिर उसको अपनी कृपाण से सदैव के लिए मुक्त कर दिया।

गुरु साहिब ने जलंधर में भी यात्रा की। बस्ती शेखां (जलंधर शहर का एक मोहल्ला) के मुसलमानों को अपने विचारों से अवगत करवाया। प्रचलित परंपरा के अनुसार बहुत-से मुसलमान गुरु साहिब के श्रद्धालु-समर्थक बन गए। कभी-कभी वह करतारपुर से मालवा क्षेत्र में भी

प्रचार करने के लिए चले जाते। सुधार, गुजरखान, सिधवां कलां, राड़ा, सरहिंद, तख़तूपुर, डरोली भाई, नथाणा, काऊंके, रायकोट, लोपो, भूंदड़ आदि अनेक स्थानों पर उनके स्मृति चिन्ह यह स्पष्ट करते हैं कि उन्होंने इन स्थानों को अपने चरण-स्पर्श द्वारा पवित्र किया।

दो-ढाई वर्ष के पश्चात् गुरु साहिब श्री अमृतसर वापिस आए। इस समय (१६१७ ई) पंजाब का गवर्नर मिर्ज़ा ज्ञास बेग नियुक्त हुआ था। अगले वर्ष अर्थात् १६१८ ई को जहांगीर पंजाब आया ताकि वह पंजाब के हालातों का खुद जायज़ा ले सके। कहा जाता है कि उसने गुरु जी को भी लाहौर बुलाया। उनके साथ मिलकर शिकार भी खेला तथा कई बार उसने सरकार द्वारा आयोजित किये जशनों में भी गुरु जी को निमंत्रण दिया। गुरु जी ने लाहौर में साई मीआं मीर से भेंटवार्ता भी की।

श्री अमृतसर से परतने के फौरन बाद गुरु साहिब मुकेरियां तथा अन्य कई नज़दीकी गांवों में होते हुए श्री हरिगोबिंदपुर पहुंचे। यह शहर, जिसकी नींव (शिलान्यास) उनके गुरु-पिता श्री गुरु अरजन साहिब ने रखी थी, उसका विस्तार करने हेतु कई नई योजनाएं तैयार कीं, जिसके फलस्वरूप इस शहर का बहुत विस्तार हुआ। यह शहर फौजी दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण तो था ही और साथ ही इसकी आर्थिक (सामर्थ्य) भी गुरु साहिब ने बड़ा दी।

कुछ समय बाद गुरु साहिब ने उत्तर-प्रदेश में जाने की योजना बनाई। श्री गुरु नानक साहिब ने इस क्षेत्र में बहुत प्रचार किया, जिसके फलस्वरूप कई स्थानों पर संगत इक्ट्ठा हो गई। इस क्षेत्र में सिक्खों के विश्वास में गिरावट आ चुकी थी। उनको पुन: प्रेरित करने के लिए गैर-सिक्ख जनता को श्री गुरु नानक साहिब का संदेश दोबारा पहुंचाने के लिए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने खुद जाना उचित समझा। इस कार्य को उतेजित करने वाली एक बात और भी थी। श्री गुरु नानक साहिब ने नानकमते (गोरखमते का बदला नया नाम) जाकर जोगियों को सही (सार्थक) जीवन-जांच बताकर सीधे रास्ते डाला था। श्री गुरु अमरदास जी के समय बाबा अलमस्त जी वहां प्रचार करते थे। बाबा अलमस्त जी को जोगियों ने परेशान करना शुरू कर दिया। जोगियों का मंतव्य बाबा अलमस्त जी की प्रभुता को कम करना, सिक्ख विचारधारा का अंत करना तथा नानकमते के साथ जुड़े श्री गुरु नानक साहिब के नाम को समाप्त करना था। उनकी तंगदिली यहां तक बढ़ चुकी थी कि उन्होंने वो पीपल का पेड़ ही जला दिया जिसके नीचे श्री गुरु नानक साहिब आसीन हुए थे। बाबा अलमस्त जी बहुत दुखी हुए। जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सारी ख़बर मिली तो उन्होंने तुरंत नानकमता साहिब की तरफ कूच किया। नानकमता पहुंचकर उन्होंने जोगियों के साथ वार्तालाप की। जोगियों ने पहले तो गुरु साहिब को बहस में पराजित करने की बहुत कोशिश की, बाद में मारने की धमकी दी। फिर जब उन्होंने देखा कि छठम् पातशाह न तो दलील में पराजित होते है न ही भय उन पर कोई असर करता है तो उन्होंने बाबा अलमस्त जी से विरोधता छोड़ दी।

कुछ समय गुरु साहिब नानकमता साहिब में रहकर दोबारा पास के क्षेत्रों में प्रचार करने लगे। उपरांत गांव डरोली, ज़िला फिरोज़पुर को वापिस पहुंचे तो फिर श्री अमृतसर पहुंचे।

शीघ्र ही गुरु जी ने कश्मीर जाने का विचार बनाया। आप तेज गति से घोड़े पर सवार होकर अपने कुछ श्रद्धालुयों एवं घुड़ सवारों के साथ सियालकोट होते हुए मकोरियां वज़ीराबाद, मीरपुर, भंवर तथा बहिराम आदि

स्थानों का जायज़ा लेते हुए श्री नगर पहुंचे।

सियालकोट उन दिनों सूफियों का केंद्र (मुख्य स्थान) समझा जाता था। गुरु साहिब ने उनसे विचार-विमर्श किया तथा उनको हमख़्याल बनाने का प्रयत्न किया। सियालकोट के पास चप्पर नाला में गुरु साहिब की याद में सिक्खों ने एक ताल बनवाया, जिसको गुरुसर कहा जाता है। श्री नगर जाते हुए गुरु साहिब ने एक मुसलमान कट्टूशाह के घर में विश्राम किया। आप जी ने उसको सिक्ख विचारधारा का गहनता से चिंतन करने के लिए ताकीद की।

श्री नगर में भाई सेवादास ने गुरु साहिब की बहुत मेहमान निवाज़ी की। भाई सेवादास ने भाई माधो के प्रभाव तले श्री गुरु अरजन साहिब के समय सिक्ख धर्म में प्रवेश किया था। उधर माता भागभरी गुरु साहिब के प्रति बहुत श्रद्धा-भावना रखती थी। वह बहुत देर से चाहती थी कि गुरु साहिब उसके घर विराजमान हों तथा रेज़ा कबूल करें, जो उसने बहुत चाव से स्वयं सूत कातकर बनाया था।

गुरु साहिब ने उसकी इच्छा पूर्ण की और रेज़ा स्वीकार किया। माई भागभरी को 'भागां वाली' (भाग्यशाली) कहकर सम्मानित किया गया। भाई सेवादास की सिक्खी के प्रति निष्ठा की सराहना करते हुए गुरु जी ने कहा कि वह कश्मीर में अतिशीघ्र जाकर सिक्खी का प्रचार करें। डॉ. गंडा सिंघ और प्रिंसीपल तेजा सिंघ के अनुसार, "बहुत सारे कश्मीरियों ने गुरु जी का स्वागत किया तथा उनके अनुआई बनने में गर्व महसूस किया।"

गुरु साहिब अभी श्री नगर में ही थे कि बारामुल्ला से दर्शन करने आए कुछ सिक्खों ने गुरु साहिब को मधु (शहद) भेंट किया तथा उनको चखने के लिए विनती की। गुरु साहिब ने विनती को अनसुना कर दिया। जब वो हठ करने लगे तो गुरु साहिब ने कहा, "हम इसको स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि आपने सिक्खी के मौलिक सिद्धांत का उल्लंघन किया है। रास्ते में भाई कट्टू शाह को दमे (अस्तमे) की खांसी का हमला हुआ है, उसने आपसे शहद की मांग की थी परंतु आपने देने से इन्कार कर दिया था।"

उस समय कश्मीर अभी प्लेग के घातक हमले से छुटकारा नहीं पा सका था। गुरु साहिब ने अपने संपूर्ण साधनों को जुटाकर लोगों की सेवा में कोई कसर न छोड़ी। कहते हैं कि गुरु जी स्वयं घर-घर गए, दुखी लोगों को हिम्मत दी। उनकी ज़रूरतें पूरी कीं तथा साथ ही उपदेश दिया कि सिक्खी सेवा का रास्ता है, वह हाथ-पांव धृग (बेकार) हैं जो सेवा नहीं करते। जनमानस की सेवा परमेश्वर को मंजूर है।

कुछ समय श्री नगर में व्यतीत कर गुरु जी बारामुल्ला, उड़ी तथा मुज़फ्फराबाद होते हुए पंजा साहिब पहुंचे तो वहां से वे गुजरात पहुंचे। यहां पर एक प्रसिद्ध सूफी फकीर शाह दौला रहता था। वह जन-सेवा में लगा रहता था। गुरु जी उसे मिले, वह गुरु जी को घोड़े पर सवार, कलगी सजाएं तथा कृपाण धारण किए हुए देखकर आश्चर्यचक्ति रह गया। उसने पूछा, "आप कैसे फकीर हो? आप के पास धन है, आपने विवाह करवा रखा है, आपने कृपाण भी पहन रखी है।"

तो गुरु जी ने उत्तर दिया, "दौलत गुज़रान, औरत ईमान, पुत्र निशान। कृपाण निर्धन की रक्षा, जरवाणे की भक्षा के लिए है।" इसके बाद गुरु जी ने मीरी-पीरी की विचारधारा से उसको अवगत करवाया फिर गुरु जी वज़ीराबाद तथा हाफ़जाबाद की यात्रा के बाद मट्टू भाई पहुंचे। मंडियाली में भाई लहिंगा ने गुरु जी को सूचना दी कि मिहरबान और गुरु-घर के अन्य विरोधी सरकारी अधिकारियों से मिलकर गुरु-घर के

विरुद्ध साजिशें रच रहे हैं। गुरु जी ने उन्हें भाणा (प्रभु हुक्म) मानने की हिदायत की। गुरु जी स्वयं श्री ननकाणा साहिब पहुंचे जहां उन्होंने श्री गुरु नानक साहिब के जीवन से सम्बंधित स्थानों की यात्रा की। गुरु जी ने गांव मादर की भी यात्रा की फिर गांव मांगे होते हुए गुरु जी श्री अमृतसर वापिस आ गए।

१६२७ ई में जहांगीर की मृत्यु के बाद शाहजहां मुगल सम्राट बना। उसका गैर-मुसलमानों (जिनमें सिक्ख भी शामिल थे) के प्रति व्यवहार बहुत अच्छा न था। वह नक़शबंदियों का प्रभाव मानता था। इन परिस्थितियों के समक्ष गुरु साहिब ने भांप लिया था कि संकट मंडरा रहा है। इसलिए गुरु साहिब ने पंजाब के मालवा क्षेत्र में प्रचार-यात्रा तीव्र करने का फैसला किया। उन्होंने ज़ीरा, रोडे लंडे, गिल्ल, कोतर तथा हरि आदि गांवों में प्रचार-यात्रा की कोतर तथा हरि भुल्लर जट्टों के गांव थे। उन्होंने गुरु साहिब के स्वागत में बहुत बड़ी दावत आयोजित की। गुरु जी ने उनको कहा कि दावतों से नहीं, प्रेमा-भक्ति तथा निस्वार्थ सेवा से प्रभु का दर प्राप्त होता है। चौधरी लाल उनका श्रद्धालु बन गया।

इसके बाद गुरु जी ने डब्बवाली, बडोर, महिल, मलूके आदि गांवों की प्रचार-यात्रा की तथा लोगों को स्वाभिमान से जीवन जीने की प्रेरणा दी। कुछ समय गांव डरोली में गुजारने के बाद गुरु साहिब ने दोबारा प्रचार-यात्रा आरंभ की। इस बार उन्होंने लोपो तथा सिधवां की यात्रा के पश्चात सुधार के लोगों को सिक्खी की विचारधारा से अवगत करवाया। कांगड़ में वह राय जोध को मिले। उसके भाई उमर शाह ने भी गुरु साहिब से बख़्शिशें प्राप्त कीं। राय जोध की पत्नी माई भागां ने गुरु साहिब को विनती की कि वह उसके परिवार को सिक्खी की दात बख़्शें। गुरु साहिब तुष्ट हुए, सिक्खी की दात बख़्शी तथा वचन किया, "सिक्खी की शमा (चिराग) आपके घर सदैव जलती रहेगी।"

गुरु साहिब की पंजाब के माझा, मालवा, क्षेत्र के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश से कश्मीर में भी प्रचार-यात्राएं बहुत सफल रहीं। हज़ारों की संख्या में लोगों ने सिक्खी कबूल की। इतिहास में पहली बार लोगों का ऐसे धर्म से संपर्क हुआ जिसमें हर प्रकार के शोषण को आयोग्य माना गया था। भयभीत, निआसरे, दबे हुए, सामंतों की यातनाओं का शिकार लोगों को महसूस हुआ कि वह भी मानवता के सत्कारयोग्य अंग हैं तथा वह भी इसके उद्धार तथा उत्थान के लिए हिस्सा डाल सकते हैं। १६३४ ई से आपने अंतिम समय तक गुरु साहिब ने कीरतपुर साहिब में निवास किया। इस दौरान अकसर उन्होंने पहाड़ी क्षेत्रों में कई प्रचार-यात्राएं कीं। एक बार जब श्री नगर (गढ़वाल) में प्रचार कर रहे थे तो उनकी शिवाजी के गुरु श्री रामदास समरथ से गहरी मुलाकात हुई। श्री रामदास हैरान हो गए जब उन्होंने देखा कि गुरु साहिब ने कलगी सजाई हुई है, घोड़े पर सवार हैं, शस्त्रधारी सिक्ख साथ हैं, कृपाण धारण की हुई है तथा गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहे हैं। गुरु जी ने फौरन आश्चर्य का कारण समझते हुए वचन किया कि "संत जी! आश्चर्य वाली कोई बात नहीं। सतिगुरु हलत के भी रक्षक है तथा पलत का भी। दीन तथा दुनी उसके संचालन में ही चलते अच्छे लगते हैं। इसी में संसार का भला है। गुरु जी के वचन थे :

बातन फकीरी, जाहिर अमीरी
शस्त्र गरीब की रखिया, जरवाणे की भक्खिया के लीए।
बाबा नानक संसार नहीं तिआगिआ था, माया तिआगी थी।



मीरी पीरी के मालिक, 'बंदी छोड़ सतिगुरु'

*-स. सतनाम सिंघ कोमल**

भाई गुरदास जी के श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के संदर्भ में बोल हैं :

पंज प्याले, पंज पीर छटम पीर बैठा गुर भारी ॥
अरजन काया पलट के मूर्ति हरिगोबिंद सवारी ॥

जिसमें श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की महानता का वर्णन किया गया :

गुरु जी का अवतार पिता श्री गुरु अरजन देव जी और माता गंगा जी के गृह गुरु की वडाली नामक गांव में १५९५ ई में हुआ। गुरु जी का बचपन बड़ी मुश्किलों में गुज़रा। श्री गुरु अरजन देव जी के बड़े भाई प्रिथी चंद जो गुरगद्दी पर अपना हक जताता था। श्री गुरु रामदास जी ने हर तरफ से देख जानकर श्री गुरु अरजन देव जी को गुरगद्दी दी तो प्रिथी चंद ईर्ष्या करने लगा। इसी कारण श्री गुरु अरजन देव जी के बेटे श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को बचपन में ही मारने का प्रयास करता रहा। लेकिन अकाल पुरख ने बालक हरिगोबिंद जी की रक्षा की।

श्री गुरु अरजन देव जी बड़े दूरंदेशी थे। बालक हरिगोबिंद जी को धार्मिक, सामाजिक और शस्त्र शिक्षा के लिए बाबा बुड्ढा जी को जिम्मेदारी सौंपी। बाबा जी ने प्रत्येक कला में बालक हरिगोबिंद जी को निपुण बना दिया। जो कला उनके गुरु-काल में बहुत काम आई। जहां गुरु जी सिक्ख धर्म के रहबर थे वहां वो मैदाने-जंग में शक्तिशाली योद्धा भी थे। गुरगद्दी पर बैठे संत थे और लड़ाई में सिपाही। अभी उनकी आयु मात्र ग्यारह वर्ष की थी जब उनके पिता श्री गुरु अरजन देव जी को जहांगीर के हुक्म से लाहौर बुलाकर शहीद कर दिया गया था।

श्री गुरु अरजन देव जी ने लाहौर जाने से पहले अपने सुपुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद जी को गुरगद्दी सौंप दी। गुरु-घर की शक्ति और दानशमंद सिक्खों के प्रयत्नों सदका सिक्ख धर्म का प्रचार भी हुआ और प्रसार भी। शहीदी के सदमें से उबरने में सिक्ख कौम को थोड़ा वक्त ज़रूर लगा मगर सिक्खों ने हिम्मत नहीं हारी।

गुरु जी ने गुरु-पद स्वीकार करने के बाद हुकमनामे जारी किए। मेरा हर सिक्ख अब दसवंध पैसों के रूप में नहीं बल्कि घोडों और शस्त्रों के रूप में देगा। यह इतफ़ाक की बात है कि मुगल राज्य भी भारत में पांव पसार रहा था और सिक्ख धर्म भी समाज में शुरूआती दौर में ही था। गुरु जी ने श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख़्त साहिब तामीर करवाया। जहां श्री हरिमंदर साहिब में गुरबाणी का कीर्तन होता था वहां श्री अकाल तख़्त साहिब में जोशीली वारों का गायन ढाडी करते थे। गुरु जी के ५२ अंगरक्षक थे और पांच सौ योद्धा थे जो शस्त्रों से सजे रहते थे। गुरु जी ने प्रत्येक योद्धा को घोड़ा दे रखा था। यह वो सिपाही थे जिन्होंने गुरु जी के लिए स्व अर्पण किया हुआ था। उनकी तनख्वाह गुरु जी का प्यार था। सिक्ख अपने मामले गुरु जी की हाज़िरी में सुलझाते थे।

***२४८, अर्बन अस्टेट, लुधिआना-१४१०१०; मो: ९८७२६०९९२१*

इन गतिविधियों की ख़बर दिल्ली सरकार को लग गई थी। उसको अब गुरु जी से बगावत की बू आनी शुरू हो गई थी। जहांगीर ने गुरु जी को दिल्ली बुलावा भेजा। जब गुरु जी गए तो उन्हें ग्वालियर के किले में कैद कर दिया। यह सिक्ख कौम के लिए बहुत बड़ा सदमा था क्योंकि कुछ ही समय पहले श्री गुरु अरजन देव जी को शहीद कर दिया गया था। गुरु जी ने किले में शाही भोजन स्वीकार नहीं किया। उनके लिए भोजन बाहर से गुरु के सिक्ख बनाकर लाते। गुरु जी किले में भी प्रभु-सिमरन में लीन रहते वहां जो राजे कैद थे वो गुरु जी की शख़्सियत से बहुत प्रभावित हुए। इधर पंजाब के सिक्ख गुरु जी के दर्शन हेतु जाते और किले की परिक्रमा करते व दीवारें चूमकर आ जाते। उनके दिल में दीदार (दर्शन) कर ख्वाब रहता। साईं मीयां मीर जी की कोशिशों से गुरु जी की रिहाई के हुक्म हो गये। मगर जो राजे गुरु जी की संगत बन गये थे उन्होंने गुरु जी से आग्रह किया कि हमें भी रिहा करवाएं। गुरु जी ने इनके बिना रिहा होने से साफ इन्कार कर दिया। लेकिन फैसला यह हुआ जितने राजे गुरु जी के चोले को पकड़कर के निकल सकते हैं उनको रिहा कर दिया जाएगा। गुरु जी ने इस बात को स्वीकार कर लिया। अब गुरु जी ने बावन कलियों वाला चोला बनवाया। उन कलियों को थामकर बावन राजाओं को किले से छुड़वा लिया। इसी कारण आप जी बंदी छोड़ के नाम से विख़्यात हुए।

मुगल बादशाह ने तसलीम कर लिया कि श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी में गुमराह किया गया है, उसने चंदू को गुरु जी के हवाले कर दिया। उसे लाहौर की गली-गली में घुमाया गया तो फिर एक गली में उसे ले जा रहे थे तो एक भठिआरे ने क्रोध में आकर चंदू के सिर में कड़छा मार दिया।

जितनी देर जहांगीर ज़िंदा रहा हकूमत के साथ सिक्खों का कोई टकराव नहीं हुआ। मगर जब शाहजहां ने हकूमत की बागडोर संभाली फिर कशीदगी वाले हालात बन गये। मगर जितना भी समय गुरु जी को अमन वाला मिला गुरु सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए प्रयत्नशील रहे। जम्मू-कश्मीर और पीलीभीत तक गुरु जी गये। गुरु जी जब गुजरात के दौरे पर थे तो एक शाह दौला फकीर था जिसने गुरु जी के शाही ठाठ देखकर गुरु जी पर सवाल कर दिए।

हिन्दू की तो पीरी की?
औरत की तो फकीरी की?
पुत्र की तो वैराग की?
दौलत की तो त्याग की?

गुरु जी का जवाब था :

औरत ईमान।
पुत्र निशान।
दौलत गुज़रान।
फकीर न हिंदू न मुसलमान।

सन् १६२७ ई को जब जहांगीर मर गया तो शाहजहां गैर मुस्लिमों को तंग करने लग गया। सिक्ख जंग करने के लिए तैयार थे मगर गुरु जी ने मना कर दिया। गुरु जी की पुत्री की शादी की तैयारी हो रही थी तो शिकार पर गए सिक्खों के हाथ एक बाज़ आ गया। उन्होंने मुगलों को देने से इन्कार कर दिया। इसी बात पर मुखलिस ख़ान लाहौर से लड़ने आ गया। सिक्ख इसके लिए तैयार तो न थे मगर जब मुगल लड़ने आ ही गये दूसरा जब गुरु जी साथ हैं तो किस बात का डर था? गुरु जी की ओट ले सिक्ख खूब लड़े। जब मुखलिस ख़ान मारा

गया तो जो सिपाही बचे थे, भाग गये। विजय गुरु जी की हुई।

इसके बाद गुरु जी श्री हरिगोबिंदपुर में आ गये। गुरु जी ने मुसलमानों के लिए मस्जिद बनवाई। वहां का एक धनाढ हिंदू भगवान दास था, जिसको गुरु जी की आमद अच्छी नहीं लग रही थी। उसने लड़ाई छेड़ दी। लड़ाई तीन दिन चली। जलंधर का फौजदार अबदुलारान, भगवान दास घरेड़ और उसका बेटा रतनचंद भी मारे गये। विजय गुरु जी की हुई। गुरु जी ने लड़ाई करने की इच्छा कभी नहीं की मगर तलवार के सवाल का जवाब कृपाण से ही दिया ऐसी ही दो लड़ाई और करनी पड़ी जिसमें भी गुरु जी की ही विजय हुई। एक में उनका पाला हुआ पठान पैंदे खां हरामखोर हो गया था। दुश्मनों को साथ लेकर लड़ने आ गया था और मारा गया और दूसरी लड़ाई दो घोड़ों की वजह से हुई। वो ऐसे हुआ कि गुरु जी के लिए काबल की संगत दो घोड़े लेकर आ रही थी। घोड़े बहुत सुंदर थे। मुगल सिपाहियों का दिल बेईमान हो गया और उन्होंने छीन लिए। सिक्ख संगत ने आकर सारी बात गुरु दरबार में रखी तो भाई बिधी चंद जी को गुरु जी ने हुक्म किया भाई बिधी चंद जी गये वो बहुत दिलेर और जांबाज़ थे। वे एक घोड़ा तो घासी बनकर ले आये और दूसरा नजूमी बनकर। जब मुगलों को पता चला कि यह काम तो उनका है जिनके घोड़े थे और वो ले गये मगर उनसे नाकामी बर्दाश्त नहीं हुई। गुरु जी तब मालवा के इलाके में धर्म प्रचार के लिए गये हुए थे। इतिहास में ज़िक्र है कि मुगलिया फौज ने अपने सब जरनैल मरवा लिए और फौज का भी बड़ा नुक्सान करा बैठे और भाग गये। सिक्ख भी १२०० के करीब शहीद और ज़ख्मी हुए। विजय फिर भी गुरु जी की हुई। उसके बाद गुरु जी ने अपने अंतिम दस वर्ष कीरतपुर साहिब में गुज़ारे।

गुरु जी ३ मार्च, १६४४ ई में ज्योति-जोत समा गये। श्री गुरु नानक देव जी के पद चिन्हों पर चलते हुए गुरु जी ने पंजाब से बाहर जाकर प्रचार भी किया और प्रसार भी। गुरगद्दी पर बैठे वो संत थे ब्रह्मज्ञानी थे और मैदाने-जंग में वीर योद्धा। वो जहां जाते अपना नया प्रभाव छोड़ते। आप जब श्री अकाल तख़्त साहिब में सिंहासन पर बैठते थे तो दो कृपाणें पहनते थे। एक आध्यत्मिक शक्ति और दूसरी सांसारिक शक्ति। उनको भय और भाव परमात्मा का ही था। इंसान को प्यार ही करते थे। डर नाम की तो कोई भी चीज़ उनके जीवन में नहीं थी। अपने सिक्खों पर विश्वास इतना और सोच कितनी ऊंची थी। भाई गुरदास को व्यापारी बना दिया और भाई बिधी चंद जी को प्रचारक। गुरु जी जानते थे कि एक विद्वान व्यापार करेगा तो सौदा खरा करेगा और जो एक अच्छा सिपाही है वो अच्छा संत बनेगा। गुरु जी ने बाबा गुरदित्ता जी को चार प्रचारक नियुक्त करने के लिए कहा इसलिए प्रचार के लिए उदासियों को प्रचारक चुन लिया गया। यही चार धूणे कहलाये। जिसमें बाबा अलमसत जी, बाबा फूल जी, बाबा गोंदा जी और बाबा बालू जी हसना थे। जिन्होंने दूर-दूर तक सिक्ख धर्म का प्रचार एवं प्रसार किया। 

बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब

*-प्रिं: हरिभजन सिंघ**

मनुष्य-बुद्धि को चक्रित करने वाली सबसे बड़ी बात यह है कि गुरु साहिबान ने मात्र शरीर बदले परंतु ज्योति एवं युक्ति समानांतर एक ही रही। ज्योति एवं युक्ति के आगे चलने में न शरीरों का परिवर्तन ही बाधक हुआ और न ही आयु का बड़ा या छोटा होना। शेख़ साअदी द्वारा दर्शायी गई इस सच्चाई का सबसे बड़ा प्रमाण इसी गुरु-चरित्र से मिलता है :

बजुरगी ब-अकल न बसाल।
अमीरी ब-दिल न बमाल।

अर्थात् प्रशंसा निर्मल बुद्धि तथा गुणों पर ही निर्भर है, न कि बड़ी उम्र पर। अमीरी का सम्बंध दिल से है, दौलत से नहीं।

यही कारण है कि अगर ९४ वर्ष की वृद्ध आयु में श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाये गए निर्मल पंथ का प्रचार तथा उसे परिपक्व करते नज़र आते हैं तो उसी तरह बाल-गुरु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब भी उसी गाडी-राह पर गुरमुखों की सुविधा तथा सुख-शांति के लिए नये कीर्तिमान स्थापित करते दिखाई देते हैं। आओ, दुनिया में हुए इस अजूबे को समझने तथा अगंमी सुरूर में आनंदित होने के लिए बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के विचित्र जीवन-चरित्र पर एक विहंगम दृष्टि डालें।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब का आगमन ८ सावन, सं. १७१३, तद्नुसार ७ जुलाई, १६५६ ई को (शीशमहल) कीरतपुर साहिब (रोपड़) में श्री गुरु हरिराय साहिब के घर माता किशन कौर जी की पावन कोख से हुआ। आप जी की संक्षिप्त जीवन-यात्रा में घटित कुछेक खास घटनायों का विवरण तथा महत्त्व इस प्रकार है :-

गुरिआई : गुरु-घर की यह मर्यादा रही है कि गुरगद्दी दुनिया की महज़ 'बिंदी' (बिंदु) रीति तथा बड़ी आयु की जगह मात्र योग्यता के आधार पर ही बख़्शी जाये। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब का बड़ा भाई रामराय बड़ा सियाना, चतुर, नीति-निपुण तथा सिक्ख संगत एवं मसंदों में सम्मान की नज़र से देखा जाता था। जब औरंगजेब ने श्री गुरु हरिराय साहिब को दिल्ली आने के लिए बुलावा भेजा तो उन्होंने अपनी जगह रामराय को दिल्ली भेज दिया और साथ ही हर प्रकार से चौकस रहने की हिदायत भी की। जब रामराय ने बादशाह की खुशनूदी हासिल करने का अयोग्य प्रयत्न किया तथा श्री गुरु नानक साहिब की बाणी की एक पंक्ति *"मिटी मुसलमान की"* की जगह *"मिटी बेईमान की"* कहने की घोर अवज्ञा की तो श्री गुरु हरिराय साहिब ने उसको अपने सामने न आने के लिए कहा और सदा के लिए उसका त्याग कर दिया।

दिल्ली-यात्रा : श्री गुरु हरिराय साहिब की नीति यह थी कि *"नहि मलेश को दरशन दे हैं।"* आप जी ने श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब को ७ अक्तूबर, १६६१ को गुरगद्दी देने के उपरांत इसी नीति को अपनाने की आज्ञा की थी। रामराय इस बात को जानता था। बादशाह भी इससे अनजान नहीं था। बादशाह ने श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब को खुद पत्र लिखने की जगह मिर्ज़ा राजा जय सिंह से गुरु जी की तरफ

दिल्ली-भ्रमण हेतु पत्र लिखवाया किंतु गुरु जी ने दिल्ली जाने से इंकार कर दिया। जब दिल्ली की संगत की गुरु-दर्शन हेतु लिखी चिट्ठी राजा के अहिलकारों ने पढ़कर सुनाई तो आप जी ने कहा, "जहां संगत याद करेगी, वहां हम जरूर जायेंगे।"

दिल्ली के रास्ते में घटित हुई घटनाओं में से यह घटना बड़ी आलौकिक तथा सतिगुरु जी की प्रतिभा को बढ़ाने वाली है। गुरु जी ने पहली रात पंजोखरा नामक स्थान पर बिताई। वहां का अहंकारी पंडित लाल चंद गुरु जी को मिला और कहने लगा, "आपको सब गुरु हरिक्रिशन कहते हैं। आप बड़े महान कहे जाते हो! श्री कृष्ण जी ने तो गीता रची थी, आप उसके अर्थ करके बताओ और मेरे साथ शास्त्रार्थ करो।"

श्री गुरु नानक साहिब के घर से प्राप्त हुई नम्रता के धारणी सतिगुरु जी बोले, "भाई! हम तो अकाल पुरख के सेवक हैं। कला तो अकाल पुरख की ही बरतती है। हम तुम्हारे साथ शास्त्रार्थ फिर करेंगे, पहले तुम नगर से अपनी इच्छा अनुसार कोई आदमी ले आओ। श्री गुरु नानक देव जी की कृपा द्वारा वो आदमी गीता के अर्थ करके तुम्हारी संतुष्टि करेगा।"

पंडित लाल चंद गांव में गया और छज्जू झीवर, जो बिलकुल ही अशिक्षित था, को साथ ले आया। सतिगुरु ने उसको "नदरी नदरि निहाल" किया और कहा कि इस पंडित की संतुष्टि करो! गुरु जी ने उसके सिर पर अपनी छड़ी रख दी। पंडित जी ने गीता के कठिन से कठिन श्लोकों के अर्थ पूछे। छज्जू जी ने उनके तुरंत अर्थ कर दिए। पंडित यह लीला देखकर सतिगुरु के चरणों में गिर पड़ा, क्षमा मांगी तथा गुरु जी का सिक्ख बना।

दिल्ली विश्राम : दिल्ली में गुरु जी राजा जय सिंह के बंगले, जहां आजकल गुरुद्वारा बंगला साहिब है, में ठहरे। बादशाह ने गुरु-दर्शन के लिए इच्छा प्रकट की तो आप ने पिता जी द्वारा किए गए आदेश की रौशनी में उत्तर भेजा कि उनका बड़ा भाई रामराय उनके पास है, राजनीतिक मामलों के बारे में उनके साथ बातचीत कर ली जाये। प्रभु-भक्त एवं सांसारिक मायाधारी का आपस में क्या मेल? दूसरा, उनको संगत एवं रोगियों की सेवा से फुर्सत नहीं। गुरु जी ने बादशाह को उपदेश के तौर पर गुरबाणी का यह शबद लिखकर भेजा :

किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥
जा मनि नाही सचा सोइ ॥
किआ मेवा किआ घिउ गुड़ मिठा
किआ मैदा किआ मासु ॥
किआ कपड़ु किआ सेज सुखाली
कीजहि भोग बिलास ॥
किआ लसकर किआ नेब खवासी
आवै महली वासु ॥
नानक सचे नाम विणु सभे टोल विणासु ॥२॥
(पन्ना १४२)

जब शहज़ादा मुअज़्ज़म दर्शन के लिए आया तो गुरु जी ने उसको आत्मिक उपदेश देकर निहाल किया। जब रामराय को गुरगद्दी न दिए जाने की बात चली तो गुरु जी ने इस सम्बंधी श्री गुरु नानक देव जी से चली आ रही रीति एवं चुनाव की कसौटी की ओर इशारा करते हुए शहज़ादा को बताया कि रामराय ने बादशाह के लिहाज में आकर श्री गुरु नानक देव जी की बाणी बदली है, अतः गुरगद्दी के बारे में उसका दावा झूठा है।

शहज़ादे के साथ हुई उपरोक्त विचार-चर्चा से बादशाह गुरु जी की बुद्धिमता का कायल हो गया परंतु इसलामी विचारधारा का धारक होने

(शेष पृष्ठ २७ पर)

गुरु साहिबान की मानवता को देन

*-डॉ. सरूप सिंघ अलग**

एकता एवं भाईचारे की भावना सिक्ख जीवन का मूल आधार है। पंचतंत्री प्रणाली इसकी सभ्यता है। पांच प्यारे, पांच जयकारे, पांच तख़्त, *"पंच परवाण पंच परधानु ॥ पंचे पावहि दरगहि मानु ॥"* की बात बच्चे-बच्चे के स्वभाव में संचित है और *"एकु पिता एकस के हम बारिक"* का उपदेश प्रत्येक में परस्पर भाईचारे की भावना पैदा करने के लिए स्रोत का कार्य कर रहा है। *"मानस की जाति सबै एकै पहचानबो ॥"* का ईश्वरीय महावाक्य भाईचारे की भावना की विचार-शृंखला को और मज़बूत करता है। सिक्ख गुरु साहिबान ने *"एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥"* की भावना दृढ़ बनाकर यह भेदभाव ही मिटा डाला कि एक मनुष्य दूसरे से जात-पात, कर्मकांड और गरीबी या अमीरी के कारण ऊंचा-नीचा या छोटा-बड़ा हो सकता है परंतु सब में एक ही परमात्मा का प्रकाश जगमगा रहा है, इसलिए अन्य मानवता का आदर-सम्मान करना और उनके विचारों को मान्यता देना गुरु के सिक्ख के लिए आवश्यक हिदायत है।

"ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥" की भावना के तत्व को याद रखने के लिए गुरु साहिबान ने लंगर, पंगत और संगत को सांझा अर्थात् एक कर दिया; पूजा-अर्चना, खाना-पीना और स्नान (सरोवर) इकट्ठे कर दिए। सिक्ख पंथ के तीर्थ-स्थान समूची मानवता के सांझे तीर्थ बनकर संसार के धार्मिक मानचित्र पर उभरे, जिनमें प्रत्येक मनुष्य समानता के आधार पर बिना किसी भेदभाव, बिना किसी भय और बिना किसी झिझक के आज़ादी से विचरकर आनंद ले सकता है। श्री हरिमंदर साहिब को सत्य, शक्ति और नम्रता का परिचायक बनाने के लिए इसको धरती के साधारण तल से नीचे रखा गया है। इसके चारों ओर रखे दरवाज़े इस बात के सूचक बनाए गए हैं कि सिक्ख धर्म-स्थान किसी समुदाय, बिरादरी या कौम की मलकीयत अर्थात् संपत्ति नहीं बल्कि परमात्मा के धाम होने के कारण सबके लिए समान प्यार और अपनेपन के प्रतीक हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जैसे ईश्वरीय ग्रंथ में भी केवल सिक्ख गुरु साहिबान की बाणी ही नहीं शामिल की गई बल्कि अन्य मत वाले मगर सत्य के पुजारी महापुरुषों की बाणी को भी आदरणीय और महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। ये महापुरुष महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि प्रांतों से सम्बंधित थे। मुख्य उद्देश्य केवल यह था कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज की जाने वाली बाणी गुरमति आशय और भावनाओं के ही अनुकूल हो, जो अहंकार का नाश करे और मिठास, प्रेम-प्यार, नम्रता और भाईचारे की भावनाओं व विचारधाराओं का प्रदर्शन करे, जिसमें समूह मानवता के लिए सत्य और शांति का संदेश हो, जिसके द्वारा आत्मिक तृप्ति, सामाजिक भलाई हो और आर्थिक स्वाधीनता प्रबल हो सके।

'अमृत' की जो दात बांटी गई, वह भी केवल किसी एक संप्रदाय के लोगों के लिए ही नहीं बांटी गई। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों, भिन्न-भिन्न समुदाय के 'पांच प्यारे' साजकर एकता पैदा करने की एक अद्वितीय मिसाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने

प्रदान की। जिसके कारण सदियों से चली आ रही जाति-प्रथा और आपसी भेदभाव की शृंखलाएं टूटने लग गईं। यह अपने आप में एक क्रांतिकारी एवं आलौकिक कार्य था।

गुरु साहिबान ने गृहस्थ जीवन में रहकर मानवता की सेवा की और परमात्मा की भक्ति व नाम का जाप करने की जो ताकीद की उसे जन-जन तक पहुंचाने के लिए उन्होंने देश-विदेश का भ्रमण किया। श्री गुरु नानक देव जी ने प्रचार-यात्रा करके एकता और भाईचारे का संदेश घर-घर पहुंचाने के सफल प्रयत्न किए। श्री गुरु नानक देव जी ने नाम जपने, किरत करने व वंड छकने का उपदेश दिया। श्री गुरु अंगद देव जी ने जीवन में आज्ञाकारी बनने की प्रेरणा का प्रचार और संचार किया। श्री गुरु अमरदास जी ने वृद्ध अवस्था में निष्काम सेवा-भावना और लंगर-पंगत का नियम दृढ़ करवाया, ताकि परस्पर भ्रातृ-भाव की भावना उजागर हो। श्री गुरु रामदास जी ने प्रेम-प्यार तथा समर्पण के गुणों को मनुष्य-मात्र के मन में उजागर किया। श्री गुरु अरजन देव जी ने अपना पावन बलिदान देकर दुख-सुख में एक समान रहने की बात सुदृढ़ कराई। छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी-पीरी की कृपाणें धारण करके अपने स्वाभिमान को बरकरार रखते हुए सम्मानपूर्वक जीने का साहस दिया। ऐसा करने से 'भक्ति' के साथ-साथ 'शक्ति' भी सिक्ख के जीवन का अटूट अंग बन गई। यह सिक्ख के कौमी जीवन में एक नया मोड़ था, जिसने आगे चलकर भारतीयों की जीवन-पद्धति तथा सोच-शक्ति में एक बड़ा परिवर्तन ला दिया। श्री गुरु हरिराय साहिब ने मनुष्य के स्वभाव को एक समान रखने के लिए उसमें नम्रता के गुणों को अधिक सुदृढ़ किया। आठवें गुरु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने हमें दीन-दुखियों की सेवा करने का ढंग सिखलाया। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने नेकी पर आधारित मूल्यों और दूसरों के हितों की रक्षार्थ हेतु अपना बलिदान देने की भावना को तो प्रस्तुत किया ही था, साथ ही यह दिशा-निर्देश भी दिया कि जो मनुष्य अच्छा जीवन व्यतीत करना चाहता है, उसके लिए आवश्यक है कि वह न तो स्वयं किसी दूसरे से भयभीत हो और न स्वयं ही किसी दूसरे को भयभीत करे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अमृत छकाकर 'चिड़ियों से बाज़ तुड़वाने' (अर्थात् असहाय लोगों में शक्ति का संचार कर उन्हें शक्तिशाली बनाना) की ताकत भर दी थी, जो नेकी के लिए, देश धर्म के सम्मान के लिए, अपने आप को कुर्बान कर देना एक मामूली बात समझते थे। खालसा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नेतृत्व में "अकाल पुरख की फौज" बन गया जो बुराई का शत्रु और निर्बलों व मज़लूमों का रक्षक बन गया। दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का एक और अद्वितीय कारनामा श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु की पदवी प्रदान करने का हुआ, जिसके कारण मानवता का गुरु 'शबद गुरु' बन गया। खालसा शुभ कर्म करने वाले बेहतरीन मनुष्य के रूप में संसार के समक्ष आया, जिसके लिए सारी मानव जाति एक समान हैं। उसके लिए 'गरीब का मुंह गुरु की गोलक' बन गया। संकीर्णता (तंगदिली) गुरु साहिबान को तो क्या उनके मामूली से मामूली सेवक के मन को भी अपने प्रभाव में नहीं ले सकती। जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को यह पता चला कि भाई घन्हैया जी युद्ध में घायल हुए दोनों सेनाओं के सैनिकों को बिना किसी भेदभाव के पानी पिला रहे हैं तो उन्होंने भाई घन्हैया जी को शाबाश दी और मरहम की डिबिया देते हुए कहा कि पानी पिलाने के साथ-साथ घायलों के ज़ख्मों को भी ठीक करने का प्रयत्न करो। ऐसे में वर्तमान रेडक्रॉस का आरंभ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आदेशों और

उपदेशों के कारण ही संभव हुआ।

गुरु साहिब की उदारता और मन की विशालता का पता इस बात से भी चलता है कि उन्होंने सत्य का पक्ष लेने वाले अन्य मत वालों का भी हमेशा आदर-सम्मान किया। वह ऐसे महान मानव का निर्माण करना चाहते थे जिसके मन में गरीबों और लाचारों के लिए दया की भावना हो; जो दीन-दुखी के लिए ढाल हो और ज़ालिम के लिए तेग हो।

क्षेत्रीय सीमाएं, जात-पात के संकीर्ण प्रतिबंध सिक्ख गुरु साहिबान के इरादों में कभी बाधक नहीं बन सके। गुरु साहिबान का आदेश था कि शक्ति का प्रयोग अमन, भ्रातृभाव, भाईचारे, नेक काम करने और ऊंचे आदर्श कायम करने के लिए ही करना है। किसी भी हालत में इस अद्भुत शक्ति को चंगेजी, चांडाली, अत्याचारों के लिए प्रयोग में नहीं लाना। इस प्रकार तेग का धनी (बहादुर), किरदार का धनी (चरित्रवान) और गुफ्तार का धनी (बातचीत में प्रवीण) होकर मानव समाज में उभरा। 

बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब

(पृष्ठ २४ का शेष)

के कारण उसने गुरु जी को भी परखना चाहा और यह कार्य राजा जय सिंह के जिम्मे लगाया। राजा गुरु जी को महलों में यह विनती करके ले गया कि वहां पटरानी तथा अन्य परिवार उनके दर्शन करना चाहते हैं। महलों में पहुंचकर गुरु जी को विनती की गई कि वे परिवार में से पटरानी की पहचान करें। आप जी प्रत्येक के सिर पर छड़ी रखते हुए कहते जायें, "यह पटरानी नहीं!" जब पटरानी के सिर पर छड़ी रखी तो कहा, "यह है पटरानी!" तत्पश्चात गुरु जी उसकी गोद में बैठ गए और इस तरह उसकी पुत्र की मनोकामना पूरी की।

ज्योति-जोत समाना : उन्हीं दिनों दिल्ली में बुखार एवं चेचक की बीमारी फैली हुई थी। सतिगुरु जी ने रोगियों की दिन-रात सेवा की। उनके पावन दर्शन से तन एवं मन के रोग दूर होते थे। गुरु जी ने रोगियों के उपचार के लिए औषधियों का प्रबंध करवाया।

आखिर सतिगुरु जी को भी चेचक निकल आई। संगत भयभीत हो गई। आप जी ने इसको भी एक अलाही रमज़ बताते हुए सबको सतिनाम का उपदेश दिया तथा धैर्य धारण करने एवं भाणा मानने के लिए भरपूर प्रेरणा की। गुरु जी ने अपनी सांसारिक यात्रा लगभग आठ वर्ष में सम्पूर्ण की। आप जी ने जीवन के अंतिम समय में गुरगद्दी के अगले उत्तराधिकारी के लिए फरमाया : "बाबा बकाले।" आप जी ३ वैसाख, सं. १७२१ तद्नुसार ३० मार्च, १६६४ ई. को दिल्ली में ज्योति-जोत समा गए।

गुरु जी का नवम् गुरु के बारे में इस प्रकार संकेत करना सिक्खों को वास्तविक गुरु अर्थात् अगुआ ढूंढने के लिए परीक्षा में डालना था, जो उनको देने-योग्य शिक्षा तथा उपदेश का एक अहम अंग थी। उनको सच्चे एवं कच्चे गुरु के चुनाव का ज्ञान देना आवश्यक था।

सतिगुरु जी की मन एवं तन का रोग दूर करने वाली शक्तियों का अनुभव करते ही संगत द्वारा अरदास में प्रतिदिन यह सत्य दोहराया जाता है-- *"श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठै सभि दुखि जाइ।"*

(अनुवादक-- स. गुरप्रीत सिंघ भोमा)



मन करहला मेरे पिआरिआ

*–डॉ. सत्येंद्रपाल सिंह**

संसार में सबसे चंचल एवं गतिमान मनुष्य का मन है जो उसकी सारी इंद्रियों को अपने वश में कर लेने और कुछ भी करवा लेने की क्षमता रखता है। मन यदि सत्य के मार्ग पर है तो मनुष्य का जीवन सफल हो जाता है अन्यथा वह अपने मन का दास बनकर सारे औचित्य और तथ्य दरकिनार करता रहता है। उसे पता ही नहीं चलता कि उसने क्या कर दिया है और क्या करने जा रहा है। मन की इस असीम शक्ति को गुरु साहिबान ने गंभीरता और गहनता से समझते हुए उसे मानव जीवन के उद्धार के लिए उन्मुख करने की राह दिखाई। गुरु साहिबान ने मनुष्य के मन को कुमार्ग पर चलने से होने वाले पतन के प्रति भी सचेत किया और मन के योग से परमात्मा को पा लेने की युक्ति भी बतायी। गुरबाणी में मन के साथ बड़े प्यार और मनुहार के साथ बातें की गयी हैं। इससे आध्यात्म के बड़े गूढ़ रहस्य अपने आप अनावृत होते चले जाते हैं और आम समझ वाला मनुष्य भी परमात्मा की राह को पा लेता है।

सुणि मन मित्र पिआरिआ मिलु वेला है एह ॥
जब लगु जोबनि सासु है तब लगु इहु तनु देह ॥
बिनु गुण कामि न आवई ढहि ढेरी तनु खेह ॥१॥
मेरे मन लै लाहा घरि जाहि ॥
गुरमुखि नामु सलाहीऐ हउमै निवरी भाहि ॥१॥
(पन्ना २०)

उपरोक्त शबद श्री गुरु नानक साहिब का है, जिसमें वे मन को मित्र व प्रिय कहकर सम्बोधित करते हैं। वैसे यह भी उल्लेख मिलता है कि इस शबद का उच्चारण गुरु साहिब ने उस समय किया था जब वे पहली बार भाई लहिणा जी से मिले थे किंतु गुरबाणी सार्वभौमिक व शाश्वत है, इसलिए मन को सम्बोधन की बात अधिक उपर्युक्त लगती है। गुरु साहिब मन को स्मरण करवाते हैं कि जब तक सांस चल रही है तब तक ही तन है, इसके बाद यह भस्म की ढेरी हो जाने वाला है। बस शुभ कर्म ही बचेंगे जो साथ जायेंगे। शुभ कर्म संग्रह करने और प्रभु में लीन होकर विकारों से विरत होने से ही उद्धार होगा। मन प्रभु में लीन होकर अनमोल बन जाता है।

मनु माण्कु निरमोलु है राम नामि पति पाइ ॥
(पन्ना २२)

मन की शोभा और मर्यादा परमेश्वर को मन में बसा लेने से है। परमेश्वर मन में न हो तो मनुष्य की मर्यादा जाती रहती है। मन को वश में करना असंभव हो जाता है, मन टिक नहीं पाता।

साधो इहु मनु गहिओ न जाई ॥
चंचल त्रिसना संगि बसतु है या ते थिरु न रहाई ॥१॥ रहाउ ॥
कठन करोध घट ही के भीतरि जिह सुधि सभ बिसराई ॥
रतनु गिआनु सभ को हिरि लीना ता सिउ कछु न बसाई ॥ (पन्ना २१९)

मन की गति को समझ पाना अति कठिन है। इसे समझा नहीं जा सकता क्योंकि मन ने तृष्णा, मोह-माया, विकारों की संगत कर ली है

*ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन: ९४१५९-६०५३३

इसलिए यह चंचल हो उठा है अर्थात् वश में नहीं रहा। मन अपने मूल कर्म से हट गया और परमात्मा में चेतना को दृढ़ करने के स्थान पर व्यर्थ व्यसनों में भटक रहा है। अंतर में घर कर गये विकारों ने मन को उसके मूल कर्म से विमुख कर दिया। मन जिसे परमात्मा के ध्यान में लीन होकर ज्ञान प्राप्त करना था और उसके मोल को पहचान कर अपने जीवन का उद्धार करना था। अब वह शक्तिहीन हो गया है। मन अब मनुष्य को आवागमन के चक्र से मुक्त करने योग्य नहीं रहा। मनुष्य के सारे अस्तित्व में मन सबसे महत्त्वपूर्ण है। मन एक तरह से जीवन का आधार है। जैसा मन होगा तैसा ही जीवन का निर्माण होगा और वैसे ही फल भोगने होंगे। सारी शक्ति का केंद्र मन है, इसे श्री गुरु रामदास जी ने अपने निम्न वचन में स्वीकार किया।

मन अंदरि अंम्रितु गुरमति हरि लीवा जीउ ॥
(पन्ना १७५)

मन के अंदर अमृत की शक्ति है जो सतिगुरु के ज्ञान द्वारा खोजी जा सकती है और उस शक्ति से परमेश्वर को पाया जा सकता है किंतु मन तो साधसंगत को छोड़कर विकारों के कुसंग में घिर गया है और उस अमृत को प्राप्त कर पाने योग्य नहीं रहा। यह मन की मूर्खता है।

एहु मनो मूरखु लोभीआ लोभे लगा लुोभानु ॥
सबदि न भीजै साकता दुरमति आवनु जानु ॥
(पन्ना २१)

मन विकारों के कुसंग में फंसकर लोभी हो गया है। माया के झूठे आकर्षण उसे लुभाते रहते हैं। इसके कारण उसके विवेक का हरण हो जाता है और ज्ञान की बात उस पर कोई असर नहीं करती। बुद्धि कुबुद्धि में बदल जाती है। इससे मनुष्य आवागमन के चक्र से निकल नहीं पाता। जिसके परिणाम विनाशकारक हैं, वह उसे रुचिकर लगता है और मन वही करता चलता है। जो उसका कल्याण कर सकता है उससे वह दूर ही रहता है, उसमें मन की रुचि ही नहीं उपजती। इसी लिए मन को बड़ी ही सटीक उपमा की गयी ऊंट की, जिसका वर्णन श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना २३४ पर मिलता है। श्री गुरु रामदास जी की इस बाणी का शीर्षक ही करहला दिया गया है। ऐसी कम ही बाणियां है जो किसी शीर्षक के अंतर्गत श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित की गईं। इससे इस बाणी की विशिष्टता का पता चलता है।

जबकि समूची बाणी ही अनमोल है। करहल सिंधी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है ऊंट। ऊंट पर बैठकर सफर करते हुए जो लोक गीत गाये जाते थे उन्हें करहले कहा जाता था। कहते हैं कि एक खास लय और धुन में गाये जाने वाले इन गीतों के प्रभाव में अपने लदे भारी बोझ की परवाह किए बिना मीलों सफर बिना किसी थकान के पूरा कर लिया करते थे और ऊंट सवार का भी मनोरंजन होता रहता था। उन गीतों की विषयवस्तु माया-मोह में बांधने वाला हुआ करता था। श्री गुरु रामदास जी ने मन की उपमा दूर प्रदेश में विचरने वाले ऊंट से करते हुए उसे अपने मूल की ओर लौट आने को प्रेरित करने के लिये इस बाणी को रचा। गुरु साहिबान और गुरमति की यह विशिष्टता अपूर्व है कि उन्होंने कभी भी संसार, समाज, परिवार त्यागने की बात नहीं की और मनुष्य के परिवेश में उपस्थित तत्वों से ही उसके कल्याण की राह निकाली। इसी क्रम में लोक गीतों की शैली को भी चैतन्य की प्राप्ति के लिए उपयोगी बनाया गया। मन जो परमेश्वर की बात पर ध्यान नहीं दे रहा है और सांसारिक राग-रंग में लीन है उसे प्रेम पूर्ण भाषा में समझाना और उसके

भटकाव को समाप्त करना इस बाणी की आत्मा है। इसमें मन को सम्बोधन करने के लिए परदेसिआ, वीचारिआ (जानवान), निरमला, प्रियतम, मीत, साजन, प्राण, वडभागिआ (भाग्यवान) जैसे मन को छू लेने वाले शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिससे बाणी की संवेदनशक्ति का सहज ही आभास होता है। कैसा भी कठोर मन हो, ऐसे सम्बोधनों को सुनकर एक पल के लिये ठहरने पर निश्चय ही विवश हो जायेगा और अपनी राह बदलने का निर्णय करने की सोचेगा। गुरबाणी का ऐसा प्रभाव समय-समय पर होता रहा है। कानों में अनायास पड़े गुरबाणी के शबदों ने पैरों को गुरु-घर की ओर मोड़ दिया और कितनों के जीवन सफल हो गये। गुरबाणी का यह प्रभाव उसकी मिठास उसके प्रेम तत्व और सरलता के कारण है जो आत्मा को तृप्त करती है और एक निर्धारित गंतव्य तक पहुंचती है।

इस बाणी के आरंभ में ही गुरु साहिब मन को परदेसी कह प्रश्न करते हैं कि वह ऐसे कैसे परमात्मा से मिल सकता है जो घर छोड़कर इधर-उधर भटक रहा है। प्रियतम तो घर में है जो उसे अपने गले लगाने के लिए उत्सुक है। अपने प्रिय से मिलने वाले तो पूर्णत: भाग्यशाली होते हैं। प्रियतम तो परमात्मा है किंतु मनुष्य ने धन, तन, रूप, पद, सत्ता, प्रसिद्धि, आत्म प्रशंसा आदि को प्रिय बना रखा है। ऐसी चीज़ों को पाने के लिये तो बाहर ही दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती है। मनुष्य घर पर बैठा होता है परंतु उसका मन कहीं और लगा होता है। कभी काबुल में घोड़े खरीद रहा होता है तो कभी नये जन्मे बछड़े की चिंता कर रहा होता है। तन से उपस्थित होते हुए भी मन अनुपस्थित रह सकता है। तन घर है और मन घर में नहीं है। यह परदेस गमन ही है। यह निपट भ्रम ही है कि इनसे आनंद मिलेगा। गुरु साहिब ने कहा कि सच्चा आनंद तो प्रिय के मिलन में है। इस प्रिय का नाम परमात्मा है। इसीलिए मन प्रभु के स्मरण में लगे।

मन करहला वीचारीआ हरि राम नाम धिआइ ॥
(पन्ना २३४)

मन में अमृत है जो सुखदायक है, मुक्ति देने वाला है। इस अमृत का पान करने के स्थान पर मन विकारों के विष के पीछे पड़ा है जो अपने मोहनी रूप से छल रहा है परंतु कष्ट ही देने वाला है। जैसे अपने ऊपर कितना भी भार लदा हो उसकी चिंता किए बिना एक ऊंट गीत की लय और धुन में आनंदित होता हुआ चलता जाता है। उसे पता ही नहीं चलता कि उसके साथ क्या हो रहा है। यही हाल माया में रमे हुए मनुष्य के मन का है। मन को पता ही नहीं कि उसकी क्या गति होने वाली है। वह माया-मोह के आकर्षण में ही सुख का अनुभव कर रहा है। यह एक बड़ी भूल की तरह है।

मनु भूलो बहु चितै विकारु ॥
मनु भूलो सिरि आवै भारु ॥
मनु मानै हरि एकंकारु ॥२॥
मनु भूलो माइआ घरि जाइ ॥
कामि बिरूधउ रहै न ठाइ ॥
हरि भजु प्राणी रसन रसाइ ॥३॥
गैवर हैवर कंचन सुत नारी ॥
बहु चिंता पिड़ चालै हारी ॥
जूऐ खेलणु काची सारी ॥४॥
संपउ संची भए विकार ॥
हरख सोक उभे दरवारि ॥
सुखु सहजे जपि रिदै मुरारि ॥५॥ (पन्ना २२२)

मन उसी तरह भूल करता है जैसे ऊंट गाये जाने वाले गीत के मोह में भटकते हुए करता है। माया-मोह में लिप्त हो जाने की इस भूल के कारण मन अनेक विकारों से ग्रस्त हो

जाता है और यह विकार उसके जीवन पर भार की तरह होते है अर्थात् इनकी कीमत चुकानी पड़ती है। विकारों के कारण उसका जीवन विफल हो जाता है जबकि परमेश्वर की शरण लेने वाले ही जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर पाते है। धन, संपदा, परिवार की चिंतायें ही इतनी प्रबल रहती है कि जीवन पराजित हो जाता है। जीवन में कुछ भी परिपक्व नहीं हो पाता, माया के फेर में सुख-दुख सदैव दरवाजे पर आगंतुक की तरह खड़े रहते हैं और जीवन में अनिश्चय बना रहता है। जीवन में सहजता परमात्मा की कृपा से ही मिलती है। परमात्मा की शरण लिए बिना तो मन भटकता ही रहता है।

मनु चंचलु धावतु फुनि धावै ॥
साचे सूचे मैलु न भावै ॥
नानक गुरमुखि हरि गुण गावै ॥ (पन्ना २२२)

मन इतना चंचल है कि बार-बार भटकता ही रहता है। मन जब परमात्मा में रम जाता है तो उसे विकारों की मैल नहीं भाती और वह इनसे दूर हो जाता है। मन का ज्ञान की ओर अर्थात् गुरु की ओर उन्मुख होना ही उसकी भटकन को दूर करता है। मन तो मूलत: निर्मल है जिसे विकारों की मैल लग गई है जिससे वह अपने घर अर्थात् जीवन के लक्ष्य से और परमात्मा से दूर हो गया है।

मन करहला अति निरमला मलु लागी हउमै आइ ॥
परतखि पिरु घरि नालि पिआरा विछुड़ि चोटा खाइ ॥ (पन्ना २३४)

श्री गुरु रामदास जी ने कहा कि परमात्मा तो प्रत्यक्ष है और मन के भीतर ही है परंतु विकारों की मैल के कारण वह दिखाई नहीं देता। विकारों की मैल अति निर्मल मन को भी अशुद्ध कर देती है। इसका दुष्परिणाम उसे भुगतना पड़ता है।

मन करहला तूं मीतु मेरा पाखंडु लोभु तजाइ ॥
पाखंडि लोभी मारीऐ जम डंडु देइ सजाइ ॥
मन करहला मेरे प्रान तूं मैलु पाखंडु भरमु गवाइ ॥
हरि अंम्रित सरु गुरि पूरिआ मिलि संगती मलु लहि जाइ ॥ (पन्ना २३४)

बड़े प्यार से भटके हुए मन को मित्र और प्राण कहकर समझाते हुए गुरु साहिब ने कहा वह सारे विकारों और माया के पाखंड को त्याग दे जो उसके जीवन को नष्ट करते जा रहे है। इस तरह चलते हुए यह जीवन तो नष्ट होगा ही परलोक में भी दंड भुगतना पड़ेगा आवागमन के चक्र से मुक्ति नहीं हो पायेगी। सतिगुरु की संगत करने से और सतिगुरु की कृपा से जन्मों-जन्मों की लगी विकारों की मैल उतर जाएगी। सतिगुरु के पास ही विकारों से मुक्ति और परमात्मा से मिलन का भरपूर ज्ञान है और वही उद्धार करने में समर्थ है क्योंकि वह संपूर्ण है। सतिगुरु संपूर्ण है और संपूर्णता प्रदान करने वाला है। मन में भ्रम और भटकाव के कारण जो अपूर्णता पैदा हो गई है, उसे वही दूर कर सकता है। गुरु की एक ही सीख है कि जिस माया के लोभ में मनुष्य भटक रहा है, वह माया साथ नहीं जाने वाली और किसी भी तरह सहायक नहीं है। सहायक तो सतिगुरु ही है जो प्रभु का मार्ग बता रहा है। इसी मार्ग पर चलने से जीवन हित सिद्ध होने वाला है।

मन करहला मेरे पिआरिआ इक गुर की सिख सुणाइ ॥
इहु मोहु माइआ पसरिआ अंति साथि न कोई जाइ ॥
मन करहला मेरे साजना हरि खरचु लीआ पति पाइ ॥
हरि दरगह पैनाइआ हरि आपि लइआ गलि लाइ ॥ (पन्ना २३४)

मन को सीख देते हुए श्री गुरु रामदास जी ने कहा कि परमात्मा का सिमरन ही जीवन की मर्यादा को कायम रखने वाला और सम्मान दिलाने वाला है। धन-संपत्ति, कुल, जाति, संतान, पद, बल आदि से अंततः कुछ भी हासिल नहीं होगा। ऊंट अपने ऊपर भार लेकर कहां कहां विचरता रहता है, फिर अपने मालिक की ताड़ना भी सहन करता है। जिस भार को लादकर वह फिरता रहता है, उस भार का उसे कोई लाभ नहीं होता और इससे उसका कोई सम्मान भी नहीं बढ़ता, उसके प्रति मालिक के रख-रखाव में कोई फर्क नहीं आता। गुरु साहिब उसे अपनी इस अवस्था पर विचार करने के लिए कहते हैं और इस महा जाल से निकल जाने की प्रेरणा देते हैं। मन गुरु की शिक्षा को समझे और वैसा ही जीवन में करे। इसके लिए कोई सशक्त प्रयास करने या बीड़ा उठाने की आवश्यकता नहीं है। फिर जब मन को गुरु साहिब मीत, साजन, प्रितम और प्यारे के रूप में देखते हैं तो उससे किसी आक्रामक हठ की आशा भी नहीं रखते और न ही उसे ऐसा कोई मार्ग दिखाते हैं। इससे सहजता टूटती है। गुरमति का तो मार्ग ही सहजता और सरलता का मार्ग है। परमात्मा को जब प्रेम सहित पाना है तो चाव, भाव, लगन, इच्छा और समर्पण चाहिए न कि हठ आदि से जो मूलतः गुरु साहिबान के दर्शन के विरुद्ध है। इसीलिए श्री गुरु रामदास जी मन को विचारवान बताते हुए उसे सावधानी से विचार करने "वीचारि देखु समालि" को कहते हैं। गुरु साहिब विनम्रता से प्रार्थना "गुर आगै कर जोदड़ी" की राह दिखाते हैं। भटका हुआ मन यही कर सकता है अपने उद्धार के लिए। जिस मन का आधार ही निर्मलता है, जिससे परमात्मा का वास है, वह जोदड़ी ही करेगा विषम स्थिति से उबरने के लिए। परमात्मा से मिलने का मार्ग भी तो प्रेम सम्बंध पर आधारित है जो अति सरल एवं सहज है।

मन करहला मेरे प्रीतमा दिनु रैणि हरि लिव लाइ ॥
घरु जाइ पावहि रंग महली गुरु मेले हरि मेलाइ ॥ (पन्ना २३४)

प्रियतम मन को गुरु साहिब ने कहा कि वह दिन-रात अपनी सुरति को हरि से जोड़े रखे। उसे अपनी आत्मा और चेतना में बसा ले। गुरमति की इस राह पर चलने से मन का परमात्मा से मिलन हो सकेगा और इस मिलन से वह आनंद से परिपूर्ण हो जायेगा। यह मिलन अंतर में ही होना है इसके लिए कहीं बाहर भटकने की आवश्यकता नहीं। विकारों वश बाहर भटकते-भटकते मन थक जाएगा किंतु उसे वह आनंद नहीं मिलेगा जो परमात्मा में लीन होकर अंतर चेतना के जगने से है। परमेश्वर में लीन होने की अवस्था आनंद की अवस्था है।

-जन नानक गुरमुखि उबरे जपि हरि हरि परमानादु ॥ (पन्ना ३०१)
-मनु तनु निरमल होइ निहालु ॥
रसना नामु जपत गोपाल ॥ (पन्ना ८६६)

जीवन के उद्धार की राह परमात्मा के सांस-सांस स्मरण में है जिससे परमानंद की प्राप्ति होती है। इससे अवगुणों की मैल हट जाने से मन और तन की निर्मलता सामने आ जाती है जो परम संतुष्टि से विभोर कर देती है। परमात्मा का सांस-सांस सिमरन साधसंगत में करने से उसे पाना सहज हो जाता है।

मन करहला मेरे पिआरिआ सतसंगति सतिगुरु भालि ॥
सतसंगति लगि हरि धिआईऐ हरि हरि चलै तेरै नालि ॥ (पन्ना २३४)

(शेष पृष्ठ ४० पर)

सिक्खी केशों-श्वासों संग निभाने वाले भाई तारू सिंघ जी शहीद

-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'*

सिक्ख धर्म और सिक्ख रहित मर्यादा में केश, कंघा, कड़ा, कृपाण एवं कछहिरा पांच ककारों का बहुत अधिक महत्त्व है। इन पांच ककारों को अति सम्मान दिया जाता है। इन्हें धारण करने वाले सिंघ, सिंघनियां और भुजंगी अपने गुरु की बख़्शिश समझ इन्हें अपनी जान से भी ज्यादा प्रिय मानते हैं। इनकी आन, बान व शान के लिए वे अपनी जान तक कुर्बान कर देते हैं। महान् शहीद भाई तारू सिंघ जी ने अपने सिर के केश कत्ल करवाने की अपेक्षा अपनी खोपड़ी उतरवाने को प्राथमिकता दी थी। शहादत की ऐसी अद्भुत और लासानी मिसाल कहीं और नहीं मिलती।

भाई तारू सिंघ जी का जन्म माझा (पंजाब) के क्षेत्र के गांव पूहला में हुआ था। कृषि का पैतृक काम कर तथा नाम-सिमरन कर शांतिपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे। घर में आने वाले प्रत्येक खालसा वीर की यथाशक्ति अनुसार सेवा करते। रात्रि-विश्राम के लिए जगह देते और दर्शन कर मन की प्रसन्नता प्राप्त करते।

तत्कालीन मुगल सरकार द्वारा (यह अठारहवीं सदी की बात है) जब पूरी सिक्ख कौम ही 'कानून के विरुद्ध' घोषित कर दी गई थी और सरकारी तौर पर एलान कर दिया गया था कि किसी सिक्ख को ज़िंदा पकड़कर या मुर्दा सिंघ का सिर लाने वाले को इनाम दिया जाएगा, तब उस मुश्किल समय में सिक्खों द्वारा गांवों में रहना काफी कठिन हो गया था। सरकार का यह भी आदेश था कि जो व्यक्ति सिक्खों को पनाह देगा या छकने के लिए भोजन-पानी देगा, उसे कड़ी से कड़ी सज़ा दी जाएगी। साधारण हमदर्द लोग भी मदद करने से डरने लगे थे। परंतु निडर गुरु के सच्चे सिक्ख भाई तारू सिंघ जी न केवल अपने गांव में बसते रहे अपितु सरकार के विरुद्ध आवाज़ बुलंद करने वाले, तेग उठाने वाले खालसा की यथासंभव सेवा, मदद भी करते रहे। इसीलिए पूरा गांव उनको बहुत सम्मान देता था।

लेकिन एक लालची क्षत्रिय, जिसे भगत् निरंजनी कहा जाता था, उसने लाहौर के सूबेदार ज़करिया ख़ान के पास शिकायत कर दी कि उसके गांव में एक ऐसा आदमी रहता है, जिसके पास सभी सिक्ख आकर रहते हैं और हमारे पूरे इलाके में उन्होंने अशांति व तबाही मचा रखी है।

उस झूठे व कमीने भगत् निरंजनी की शिकायत के विषय में जांच-पड़ताल करने-करवाने की अपेक्षा ज़करिया ख़ान ने फ़ौरन हुक्म दे दिया कि भाई तारू सिंघ को गिरफ़तार कर उसके सामने पेश किया जाए।

शाही फ़ौज गांव पूहला में पहुंची तब लाहौर में लाकर भाई तारू सिंघ जी को ज़करिया ख़ान के समक्ष पेश किया गया। ज़करिया ख़ान ने पूछा, "क्या तुम सिक्खों को यानि बागियों को अपने पास ठहरने के लिए

*बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : ९८७२२-५४९९०

जगह देते हो?"

भाई तारू सिंघ जी ने दिलेराना अंदाज़ में जवाब दिया, "मैं केवल जगह ही नहीं देता बल्कि अपनी आर्थिक समर्था और पूरी आस्था के साथ उनकी सेवा भी करता हूं। खालसा की सेवा करनी मैं अपना धर्म और परम कर्त्तव्य समझता हूं। क्या तुम चाहते हो कि मैं अपना यह धर्म-कर्म छोड़ दूं?"

"हां! मैं यही चाहता हूं और क्या तुम आज यह यकीन दिला सकते हो कि आज के बाद तुम किसी बागी की मदद नहीं करोगे?"

"अरे, ज़करिया ख़ान! तुम जिन्हें बागी कहते हो, वे सच्चे सिक्ख और धर्म, न्याय की रक्षा करने वाले सच्चे देश भक्त हैं! मैं उनकी सेवा करता रहूंगा!! मेरे पास अपना कुछ भी नहीं है। जो कुछ है, वह सब मेरे गुरु की बख़्शिश है, मेहर है। मैं इसे खालसा की सेवा में लगाता रहूंगा। खालसा की सेवा छोड़ने का ख़्याल तो मृत्यु के ख़्याल से भी बुरा है।"

भाई साहिब के दिलेराना उत्तर सुनकर तथा कड़े तेवर देखकर ज़करिया ख़ान ने काज़ियों को बुलवा लिया और उनकी राय से हुक्म दिया कि इस बागी सिक्ख के सिर के बाल (केश) काट दिए जाएं। यह अपनी सिक्खी पर बहुत गर्व करता है, इसे सिक्खी से पतित कर दिया जाए।

भाई तारू सिंघ जी यह कदापि सहन नहीं कर सकते थे कि उनके गुरु की मुहर केशों का अपमान किया जाए। उन्होंने अपने नेत्र मूंद लिए और उनकी लिव (सुरति) अकाल पुरख से जुड़ गई। उन्होंने अरदास की, "हे सच्चे पातशाह! मुझे बल बख़्श कि मैं सिक्खी केशों-श्वासों संग (साथ) निभा सकूं।"

जब सरकारी आदमी उनके केश कत्ल करने को निकट आए, तब भाई तारू सिंघ जी ने कहा कि वह अपने केश कत्ल नहीं होने देंगे। उन्होंने कहा कि मैं इससे भी ज्यादा आपको कुछ दूंगा आप मेरी केशों सहित खोपरी ही उतार लो। इस तरह भाई तारू सिंघ ने अपने केशों का अपमान नहीं होने दिया बल्कि अपनी खोपरी केशों सहित उतरवा दी।

शहीदों के खून का एक-एक कतरा नए शहीद पैदा करने का कारण बनता है। आज सिक्खी अगर ज़िंदा है तो अनेक कुर्बानियों, शहादतों के कारण ही ज़िंदा है। सिक्खी की विरासत शहादतों की विरासत है।

लाहौर में शहीद भाई तारू सिंघ जी का अंतिम संस्कार किया गया। यह जगह रेलवे स्टेशन के अति निकट है और यहां 'शहीद गंज' साहिब बनाया गया है।

धन्य हैं महान् शहीद भाई तारू सिंघ जी, जिन्होंने दृढ़ संकलप, शूरवीरता, अदम्य साहस का परिचय देते हुए सिक्खी केशों-श्वासों संग निभाई। केश गुरु की मुहर हैं। हमारे सिक्ख भाइयों, बीबियों, युवक-युवतियों को भाई तारू सिंघ जी की शहादत से और शेष सिक्ख शहीदों की शहादतों से प्रेरणा लेते हुए गुरु की मुहर केशों का अपमान नहीं करना चाहिए। इनकी उचित देखभाल, संभाल व रक्षा करनी चाहिए। सिक्खी स्वरूप की अपनी विलक्षण शानदार पहचान होती है। यह अनमोल है। अद्वितीय है। अकाल पुरख की मेहर (कृपा) है। ☸

भाई रणधीर सिंघ जी

*-सिमरजीत सिंघ**

ज़िला लुधियाना में नारंगवाल नामक गांव है। यह गांव लुधियाना-योद्धां-अहमदगढ़ सड़क से ५ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। रेलवे स्टेशन किला रायपुर इस गांव से ५ किलोमीटर दूरी पर है। इस गांव में गरेवाल वंश से सम्बंधित जाटों (किसानों) का निवास है। इस वंश के लोग १४६९ ईं के आसपास पंजाब में आए थे। इन्होंने पंजाब में आकर सबसे पहले परिमाल, ललतों तथा गुज्जरवाल आदि गांव आबाद किए थे। चंदेल राजा की पीढ़ी में से राजा बैरसी हुआ है, जिसकी सत्रहवीं पीढ़ी से चौधरी गुज्जर ने १४६९ ई में हिसार के क्षेत्र से आकर गांव गुज्जरवाल की मोहड़ी गाड़कर आबाद किया था तथा इस इलाके की ५४ हज़ार बीघे ज़मीन पर कब्ज़ा किया था। गुज्जरवाल में से इस वंश के लोग आगे किला रायपुर, लोहगढ़, फलेवाल, महिमा सिंघ वाला तथा नारंगवाल में आबाद हो गए। इस क्षेत्र में इन्होंने ६४ गांव आबाद किए। संवत् १६३१ ई में छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गांव गुज्जरवाल में अपने पावन चरण डाले। गुरु जी की शिक्षाओं से प्रभावित होकर इन्होंने सिक्खी धारण कर ली। इस वंश के लोगों का इस क्षेत्र में बहुत मान-सम्मान है, इस क्षेत्र में यह लोकोक्ति मशहूर है "टिक्का धालीवालां दा, चौधर गरेवालां दी, बुजुर्गी गिलां नूं।" भारत की स्वतंत्रता के महान शहीद स. करतार सिंघ सराभा भी इस वंश में से थे।

इस वंश से गांव नारंगवाल के निवासी स. वसावा सिंघ जी इस क्षेत्र की प्रमुख शख़्सियत थे। स. वसावा सिंघ के घर स. नत्था सिंघ का जन्म हुआ। स. नत्था सिंघ अंग्रेजी, फारसी के बहुत अच्छे विद्वान थे। यह नाभा रियासत के नाज़म (जज) थे। आप जी का विवाह सिक्ख इतिहास से सम्बंध रखने वाले सिक्ख परिवार भाई भगतू जी के वंश से बीबी पंजाब कौर के साथ हुआ। भाई भगतू जी ने श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर में श्री गुरु अरजन देव जी की छत्र-छाया तले सरोवर को पक्का करने के लिए पकाई जाती ईंटों की कार-सेवा में अहम भूमिका निभाई थी।

मालवा क्षेत्र के प्रसिद्ध गांव नारंगवाल में स. नत्था सिंघ के घर ७ जुलाई, १८७८ ई को जिस बच्चे ने जन्म लिया, माता-पिता ने उसका नाम बसंत सिंघ रखा जो बड़ा होकर भाई रणधीर सिंघ के नाम से जगत में प्रसिद्ध हुआ।

आप की आयु लगभग ८ वर्ष की थी तब आप दो मंज़िला घर की छत से नीचे गिर गए। ज़मीन पर गिरने से आपके नाक पर गहरी चोट आई तथा कई दिनों तक अस्पताल में रहना पड़ा। इस चोट से आपके नाक का आकार सदैव के लिए चपटा हो गया।

आपके बचपन का अधिक समय नाभा में व्यतीत हुआ तथा आरंभिक शिक्षा नाभे से प्राप्त की। आपको पुष्पों से बहुत प्रेम था। आप राजा हीरा सिंघ नाभा के पुष्पों के बाग में अकसर जाते और पुष्पों को देखकर बहुत प्रसन्न होते थे। राजा हीरा सिंघ आप जी के स्वभाव से बहुत प्रभावित

**संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।*

थे और आप जी को बहुत प्यार करते थे।

महाविद्यालय की शिक्षा हेतु आपको मिशन महाविद्यालय, लाहौर में भेजा गया। महाविद्यालय की शिक्षा ग्रहण करते समय आपको आपके पिता द्वारा लिखे गए पत्र में सुबह जपु जी साहिब एवं शाम की रहरासि साहिब का पाठ करने के लिए प्रेरित किया गया। इस तरह आपने न केवल नित्तनेम की बाणियां ही कंठस्थ की बल्कि अन्य बहुत-सी बाणी कंठस्थ कर ली। आपको हाकी खेलने में भी बहुत रुचि थी, आप महाविद्यालय की हाकी टीम के कप्तान भी रहे। लाहौर रहते समय आप सिक्खों के ऐतिहासिक स्थान गुरुद्वारा डेहरा साहिब, शहीद गंज भाई तारू सिंघ, गुरुद्वारा शहीद सिंघ-सिंघणियां आदि के दर्शनों के लिए जाते और इतिहास की जानकारी प्राप्त करते थे। आपने मिशन महाविद्यालय लाहौर से १९०० ई में बी. ए की डिग्री उत्तीर्ण की।

आपके पिता जी चाहते थे कि आप ईसाई मिशन विद्यालय में अध्यापक के रूप में कार्य करे। पिता जी के कहने पर आपने विद्यालय में शिक्षण शुरू कर दिया। आपने पहले दिन बच्चों की प्राथना सभा के समय श्री गुरु नानक देव जी की बाणी से एक शबद पढ़कर बच्चों को सुनाया। विद्यालय का कार्यक्रम आपके मन को अच्छा न लगा तथा आपने दो-तीन दिन के बाद ही विद्यालय छोड़ दिया।

आपका विवाह नाभा के गुरसिक्ख परिवार में स. बचन सिंघ की सुपुत्री बीबी करतार कौर के साथ हुआ। सन् १९०२ ई में आप नायब तहसीलदार की नौकरी पर तैनात हो गए। आपका कार्य क्षेत्र ज़िला लुधियाना की समराला तहसील का गांव खेड़ी निर्धारित किया गया। इन दिनों पंजाब में प्लेग की बीमारी फैली हुई थी। भाई साहिब एक अंग्रेज डॉक्टर के साथ निजी सहायक के रूप में कार्य कर रहे थे। आपने अपनी नौकरी ईमानदारी तथा सच्चे मन से की जब कि वहां का अमला तथा अन्य कर्मचारी रिश्वतखोर थे। वह फंड की आय को हेराफेरी से अपने खातों में जमा करवा लेते थे। खुशामद पसंद ज़ैलदार और सफेदपोश कई तरीकों से रिश्वत तथा तोहफे देते थे जो आपको अच्छे नहीं लगते थे। आपने सभी को भ्रष्टाचार करने से रोक दिया, जिससे वो लोग इनसे अंदर से बहुत ईर्ष्या हुए। उन्होंने भाई साहिब के विरुद्ध एक झूठी शिकायत भी अंग्रेज डॉक्टर को कर दी तथा उन्हें अपने रास्ते से हटाने की कोशिश की परंतु जब भाई साहिब ने इनके चेहरे से नकाब हटाया तो इन्हें लेने के देने पड़ गए। भाई सहिब की सच्ची-सुच्ची शख़्सियत का डॉक्टर के मन पर बहुत प्रभाव पड़ा। डॉक्टर भाई साहिब से आध्यात्मिक विचारें करने लगा। डॉक्टर ने भाई साहिब जी से श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बारे में बहुत मूल्यवान जानकारी प्राप्त की। इस अंग्रेज के कहने पर भाई साहिब ने एक पुस्तक 'की श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पूजा बुत्त प्रसती है?' की रचना भी की। अंग्रेज अफसर ने आपकी ईमानदारी तथा उच्च शख़्सियत की बहुत प्रशंसा की। आपकी ईमानदारी और कार्य से प्रभावित होकर आपकी तरक्की कर दी गई परंतु उस कार्य में इनका मन न लगा तथा लोगों के दुनियावी दुखों को देखकर आप व्याकुल हो जाते। उन्होंने महसूस किया कि अफसर लोगों की सेवा नहीं करते बल्कि उनको डाकुओं की तरह लूटते है। अत्याचारी लोग झूठी गवाही तथा रिश्वत देकर बच जाते हैं, गवाह पैसे लेकर मुकर जाते हैं तथा सच्चे लोगों की कोई नहीं सुनता, वह इन झूठे केसों में फंस जाते हैं। आखिर आपने एक दिन नौकरी छोड़ दी।

१४ जून, १९०३ ई को आपने फिलौर के

पास बकापुर में पांच प्यारों से खंडे की पाहुल प्राप्त की और आपका नाम रणधीर सिंघ रखा गया। आप जी ने नारंगवाल जाकर एक शबदी जत्था तैयार किया जो संगत में जाकर नाम-सिमरन एवं गुरबाणी का कीर्तन कर संगत को गुरु-घर के साथ जोड़ने की सेवा करता था। इन्हीं वर्षों में आपने कई बार एक चौकड़ी में बैठकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का पाठ श्रवण किया।

१९०५ ई में आपने स. शाम सिंघ अटारी वाले के पोते स. हरबंस सिंघ की प्रेरणा से होस्टल में मुख्य सुपरडैंट की नौकरी कर ली। वहां पर भी कुछ समय बाद आपने नौकरी छोड़ दी और गुरमति प्रचार को अपना मुख्य उद्देश्य बना लिया। आपने पंच खालसा दीवान, श्री दमदमा साहिब बनवाया तथा १९०९ ई से लेकर १९१४ ई तक बड़े जोश से साप्ताहिक कीर्तन दीवान लगाते रहे। उन दिनों में गुरुद्वारा साहिबान महंतों के कब्जे में थे जो गुरुद्वारों की संपत्ति को निजी समझने लग गए थे। उन्होंने गुरुद्वारा साहिब में कई तरह के दुष्कर्म करने शुरू कर दिए थे। इन अनसरों में सुधार करने के लिए गुरुद्वारा सुधार लहर आरंभ हो चुकी थी।

गुरुद्वारा श्री रकाबगंज साहिब, दिल्ली की दीवार के मामले में सिक्खों की अंग्रेजों से टक्कर हुई। वायसराय हाऊस जो रायसीना पहाड़ी पर बनना था, उसकी बढ़ौतरी के लिए सरकार ने गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब की दीवार गिरा दी। सिक्खों के बढ़ते जबरदस्त आक्रोश को पहले तो अंग्रेज समझ न सके कि एक दीवार के गिरने से तो कोई सिक्खों के धर्म में हस्तक्षेप नहीं है। माहौल इतना संज़ीदा हो गया कि पंजाब से शहीदी जत्थे दिल्ली की तरफ रवाना हो गए, जिनमें भाई रणधीर सिंघ जी भी शामिल थे। ये शहीदी जत्थे अभी दिल्ली पहुंचे भी नहीं थे कि सरकार ने पहले ही दीवार नवनिर्मित कर दी। आपने बड़े साहिबज़ादों के शहीदी जोड़मेले के समय चमकौर साहिब में गुरमति सिद्धांत तथा सिक्ख रहित मर्यादा के विपरीत होते कार्यों को देखकर महंतों से गुरुधामों का कब्ज़ा लेकर पंथ को सौंप दिया।

सन् १९१४ ई में अमेरिका एवं कनाडा जैसे देशों से भारत की स्वतंत्रा के लिए नेता भारत पहुंच रहे थे और आपने भी देश का पूरा साथ दिया। आपने स. करतार सिंघ जी सराभा के साथ मिलकर १९ फरवरी १९१५ ई को गदर दिवस के रूप में माना। आप १९ फरवरी की शाम को अपने ६० साथियों सहित फिरोज़पुर छावनी में बगावत करने हेतु पहुंच गए। वहां पर आपको ख़बर मिली के किसी जासूस ने उनकी योजना के बारे में अंग्रेजों को इत्तलाह कर दी है। आप अपने साथियों सहित घर वापिस चले गए। अंग्रेज सरकार चौकस हो गई और उन्होंने देश-भक्तों को पकड़ना शुरू कर दिया। आपको लाहौर साज़िश केस के नायक माना जाता है। आपको भी अन्य देश-भक्तों की तरह ९ मई, १९१५ ई को नाभे से गिरफ्तार कर मुलतान की जेल में नज़रबंद कर दिया गया। आप पर तीन फरद-ए-जुर्म लगाए गए :
१. गुरुद्वारा रकाबगंज की दीवार के लिए बगावत।
२. स. करतार सिंघ सराभा के साथ मिलकर रजिमैंटों में अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत फैलाना।
३. युग पलटाउ पार्टी के नेता रास बिहारी बोस के कहने पर क्रांति लाना। जेल में होते अत्याचार के विरुद्ध आपने कई बार अनशन रखा। आपको ३० मार्च, १९१६ ई को उमर कैद तथा संपूर्ण संपत्ति जबत करने की सज़ा सुनाई गई। आपकी संपूर्ण संपत्ति जबत कर ली गई।

जेल में भी आपने गुरमति का प्रचार

जारी रखा। आपकी शख़्सियत और शिक्षा से प्रभावित होकर बहुत-से कैदियों तथा मुलाज़िमों ने गुरबाणी, सिमरन और गुरमति को जीवन में अपना लिया।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने इन देश भक्तों की रिहायी के लिए सिक्ख जगत को अपील की कि १ फरवरी, १९२३ ई को अरदास दिवस मनाया जाए। ४ अक्तूबर, १९२३ ई के दिन आपको लाहौर सेंट्रल जेल से रिहा किया गया। मशहूर देश-भक्त स. भगत सिंघ आपकी कुर्बानियों से बहुत प्रभावित था। आपकी रिहायी के दिन स. भगत सिंघ ने आपके साथ भेंटवार्ता की तथा सिक्खी स्वरूप में फांसी पर चढ़ने का वादा भी किया। इस भेंटवार्ता का ज़िक्र प्रसिद्ध लेखक स. जसवंत सिंघ कंवल ने अपने शब्दों में किया है कि जब स. भगत सिंघ ने भाई रणधीर सिंघ जी के चरण-स्पर्श किए तो भाई साहिब ने कहा--

"गुरू दिआ सिक्खा! सिक्खी विच पैरीं हत्थ लाउणा मनमत है। फ़तहि गज़ा। वाहिगुरू जी का खालसा ॥ वाहिगुरू जी की फ़तहि ॥" फ़तहि बुलाकर भाई साहिब ने स. भगत सिंघ को आलिंगनबद्ध किया। "तू गुरू दे बहादुर सिंघ सूरमियां वाला कारनामा कीता है। धंन तूं, धंन तेरी जणनी।" उन्होंने शूरवीर को दोहरा थापड़ा दिया।

"सिंघ साहिब जी! असीं तुहाडे बच्चे आं; पर आज़ादी दी शमा दे परवाने आं। पर कंडिआली वाड़ बिना आज़ादी दा फुल्ल हासल नहीं होणा।" स. भगत सिंघ ने पूरी दृढ़ता से कहा। "जदों तेरे वरगे बेखौफ सूरमे अज़ादी दी जंग लड़ रहे हन, फ़तहि किवें ना मिलेगी।" संत रणधीर सिंघ ने हौसले वाला थापड़ा दिया।

"तुहाडे वरगे दरवेश देश भगतां दा आशीर्वाद साडे नाल है, गुलामी दीआ जंजीरां किवें ना टुटणगीयां" सरदार का मंतव्य लोहे के कील जैसा बना हुआ था।

"जज़बात पुत्तरा कच्चा सोना, इसनूं कुर्बानी ही शुद्ध सोना बणाउंदी ऐ।"

"तुसीं महा पुरषों ततवेता हो, जिवें चलाउगे, उवें चल्लांगे। तुहाडे बोलां विच रोशनी वी ऐ ते अमल दी पकिआई वी।" आज्ञाकारी की तरह स. भगत सिंघ के अपने आप हाथ जुड़ गए।

"जे गुरमुखा इरादा इन्हां पक्का ऐ, फिर गुरु जरूर फ़तहि देवेगा। पर तू ऐने निशचे वाला गुरू मर्यादा तो किओं नसिआ? भाई साहिब ने भीतर से जिंझोड़ दिया।

"तुहाडा मतलब महां पुरखों मैं समझिआ नहीं?" उसने इंकार में सिर हिलाया।

"श्री गुरू गोबिंद सिंघ देश भगत सी जां नहीं?"

"उह तां देश भगती दे सरताज सन, जिन्हां सारा सरबंस ही आज़ादी लई कुरबान कर दित्ता। अजिही कुरबानी दी मिसाल दुनिया दी तारीख विच किधरे नहीं मिलदी, जै जै गोबिंद।" स. भगत सिंघ ने जोश में आकर नारा लगा दिया।

"श्री गुरू गोबिंद सिंघ दी इक पासे जै बुलाउंदा एं, दूजे पासे खै नूं गल लाई बैठा एं।" भाई साहिब ने नवयुवक के मन का लोहा गर्म देखकर दोहरी चोट लगाई। जिससे सरदार के मन का भ्रम टूट गया।

"तुहाडा मतलब केसां तो ऐ? सरदार ने जिंझोड़े गए मन से पूछा।

"निरी दाड़ी केसां दी गल्ल नहीं, गुरू दे सिदक विशवास दी ऐ। पुतरा आज़ादी दा पतंगा तां है, हुण गुरू दा सिदक रख लै, जां भगौड़ा हो जाह?" महापुरुषों ने उसके सामने सिदक (धैर्य) की लकीर खींच दी। "महापुरषों दुहाई रब्ब दी, मैं गुरू तो बेमुक्ख हो के तां मिट्टी ही

हो जावांगा। ना-अ-ना, सिक्ख कौम उस बापू दी पैदावार, असीं नाशुकरे तां उसदी कुरबानी दा देण, जनमा तक नहीं दे सकदे। जिस जुल्म ते गुलामी दी जड़ पुटण दी राह पधराइयां। तुसीं सिंघ जी, हुक्म करो, ओही होवेगा।" नवयुवक का जोश एवं होश पस्त हुआ पड़ा था।

"जे पुत्तरा तूं आपणे गुरु नू ऐना प्यार सतिकार दिंदा ए, फिर उहदी मरयादा तो फरारी कियों?" भाई साहिब ने उसको प्यार से अपने अलिंगन में ले लिया।

"नहीं सिंघ जी! मैं अपने गुरू दे हुकम दी अवगिआ नहीं करांगा। पिआरे श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी दा इनकलाबी राह साडा राह। जुलम ते गुलामी दी जंज़ीर हर हालत वढणी है।" सरदार भगत सिंघ ने झुककर भाई साहिब के चरण दोबारा पकड़ लिए, भाई साहिब ने स. भगत सिंघ को आलिंगन में ले लिया।" पिता समान गुरू देव जी आशीष दिओ दशमेश जी दा दिता सीस, जुलम ते गुलामी विरुद्ध उसदी आज़ादी दे मारग लग्ग जावे।"

"जेरे जुरअत वल्लों तूं बहादुर सूरमा ए। चमकौर साहिब दी गढ़ी नूं याद कर। दशमेश दे पुतरां ते तेरे भरावां, कुर्बानी दे के तारीखी जित्त हासिल कीती सी, उसे जुलम दी जंग अज वी जारी ऐ। गुरू ते जनता दी बुकल तेरे लई सदा खुली ऐ। तू दशमेश पिता दा लाडला पुतर बणना है। मैनूं पता है, मौत राणी नाल तेरा विआह होण वाला है, तेरी कुरबानी लंडन दी पारलीमैंट विच तरथल पा देवेगी। यकीन कर दुश्मन देश छड के भजण लई मज़बूर हो जावेगा। तू गुरू दा सिद्कवान सिक्ख बण के सामराज दी मौत दे वरंटा ते आपने लहू नाल दसतख़त करने हन, तेरे फांसी लगण ते सारी दुनिया मूंह विच ऊंगला पावेगी, ते देश तेरी कुरबानी दे सोहले गाऊंदा आन-शान नाल आज़ाद होवेगा। याद रखीं, बहादुर कौम दा इको कमांडर हुंदा ऐ।" संत रणधीर सिंघ ने सूरमें को थापड़ा देते हुए गले से लगा लिया।

"पिता जी असीं तिंने भरा छालां मारदे फांसी तोड़ांगे। सानूं बचाउण दीआं विऊंता बणीआ सन, असां सभ ठुकरा दित्तीयां। अभी फांसीआं चुम्म के सामराज दा मुंह काला करांगे। जंग दे मैदान विच कायर भजदे ऐ, असीं ता शहीद हो के वी दुश्मन नाल लड़दे रहांगे।"

"सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत" तुहानूं होर हौसला देण दी लोड़ नहीं।

सिपाही भेंटवार्ता समाप्त करने का इशारा कर रहे थे। संत रणधीर सिंघ ने स. भगत सिंघ को अंतिम थापड़ा दिया।

"सो पुतरा वाहिगुरू जी का खालसा ॥ वाहिगुरू जी की फ़तहि ॥ इह जान ता आणी जाणी ऐ। पर गुरू का सिक्ख आपणे आदेश नूं मुख रखदा है। तेरा सिदक नौजवानां दी अणख नूं ज़रूर वंगारेगा।

"बापू जी! जदों सिर बाबा दीप सिंघ वांग तली ते धर लिआ, फिर फिकर काहदा। फिकर करूगा दुशमण, हिसाब देण दा सो गुरू फ़तहि।

फिर दोनों महान शख़्सियतें, सुनहरी भविष्य बोती, हाथ हिलाती अलग हो गयी।

लगभग १७ वर्ष के बाद भाई साहिब जी जेल से रिहा होकर श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर के दर्शनों के लिए गए। तख़्त साहिबान से आप जी की तरफ से किए गए संघर्ष की प्रशंसा करते हुए आपको सिरोपाउ तथा प्रशंसा-पत्र देकर सम्मानित किया गया।

१९३० ई से १९६१ ई तक निष्काम अखंड कीर्तन करते हुए गुरबाणी का प्रचार करते रहे। आपसे प्रेरणा लेकर देश-विदेश में हज़ारों की संख्या में श्रद्धालुओं ने खंडे की पाहुल प्राप्त

कर गुरसिक्खी जीवन व्यतीत किया। आपने अपने गांव नारंगवाल में हर वर्ष दशम पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का गुरुपर्व मनाना शुरू किया तथा संगत को ज्यादा से ज्यादा गुरबाणी के साथ जुड़ने की प्रेरणा की।

गर्मियों में आप शिमला में कुमार हट्टी चले जाते तथा वहां नाम-सिमरन का अभ्यास करते। जिस पत्थर पर बैठकर आप नाम सिमरन किया करते थे, वह मुनीश्वर पत्थर आज भी मौजूद है।

आपने पांच प्यारों में शामिल होकर तरनतारन साहिब, पंजा साहिब, शहीद गंज, ननकाणा साहिब, पटना साहिब, पाउंटा साहिब, गुरुद्वारा कवि दरबार आदि गुरुद्वारा साहिबान का शिलान्यास किया।

आपने आध्यात्मिक ज्ञान देने वाली विद्वता भरपूर पुस्तकों की रचना की। जिनमें जेल चिट्ठीयां, रंगले सज्जण, कर्म फिलासफी, गुरमति बिबेक, अणडिठी दुनिया, गुरमति नाम अभिआस, कथा कीर्तन, सिंघां दा पंथ निराला, ज्योति विगास आदि नाम की पुस्तकें पाठकों को ज्ञान बांट रही है। १६ अप्रैल, १९६१ ई को मॉडल टाऊन, लुधियाना में ८३ वर्ष की आयु में प्रभु चरणों में विराजमान हो गए। उनका अंतिम संस्कार उनकी इच्छा अनुसार गुज्जरवाल की ढाब पर १७ अप्रैल को किया गया। इस ढाब पर भाई साहिब नाम-सिमरन करने के लिए आया करते थे। 

मन करहला मेरे पिआरिआ

(पृष्ठ ३२ का शेष)

मन ऊंट गंतव्य पाने के लिए घर के बाहर यत्र-तत्र भटक रहा है परंतु उसका गंतव्य तो अंदर घर में ही है जिसके लिए कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है। गंतव्य है परमात्मा और उसे पाने के लिए मन साधसंगत करे। साधसंगत में नाम जपने से परमात्मा सहायक हो जाता है और मुक्ति हो जाती है। परमात्मा की दया भरी एक दृष्टि ही जीवन को संवार देती है। वह परम शक्ति तो मन के भीतर ही बसी हुई है जिसे पहचानने और संभालने के स्थान पर मन भ्रमित होकर उसे बाहर खोज रहा है।

अंतरि निधानु मन करहले भ्रमि भवहि बाहरि भालि ॥ (पन्ना २३५)

जो परम तत्व के भीतर बसा हुआ है वह तो संसार की सबसे श्रेष्ठ पूंजी है किंतु भ्रम वश मनुष्य ने धन-संपत्ति, संतान, परिवार, दूसरों पर शासन करने की ताकत, लोक-प्रशंसा, पुस्तकीय ज्ञान जैसी चीज़ों को निधान मान लिया है। सतिगुरु ने परम तत्व की श्रेष्ठता का जो ज्ञान दिया है इस पर पूर्ण विश्वास करके मानने में ही हित है और इससे ही जीवन के संकट दूर हो सकते हैं।

मन करहला वडभागीआ तूं गिआनु रतनु समालि ॥ (पन्ना २३५)

जिसने इस ज्ञान को धारण कर लिया उसका जीवन सदा के लिए आनंदित हो गया। यह वैसे ही है जैसे तपती दोपहर में बोझ लाद कर लथपथ चलते जाने वाले ऊंट को सघन वृक्ष की छांव मिल जाये।

हम पंखी मन करहले हरि तरवरु पुरखु अकालि ॥ (पन्ना २३५)

भरी दोपहर में जहां दूर-दूर तक कोई नज़र न आ रहा हो, परमात्मा रूपी विशाल वृक्ष की सघन छांव मिल जाने से अधिक सुखदायक और क्या हो सकता है? 

भारतीय सेना-सिक्ख रेजिमेंट

*-स. जसविंदर सिंघ खांबरा**

सेवा मुक्त मेजर जनरल मुकशी ख़ान ने अपनी पुस्तक, 'क्राईस ऑफ लीडरशिप' में लिखा है कि भारतीय सेना का एक अभिन्न अंग होते हुए भी भारतीय सेना सिक्खों के शौर्य से अनजान ही रही क्योंकि घर की मुर्गी दाल बराबर।

भारतीय सेना को सिक्खों की वीरता से कभी सीधा वास्ता नहीं पड़ा था दुश्मनों का पड़ा था और उन्होंने इनकी शौर्य गाथाएं भी लिखी। स्वयं पाकिस्तानी सेना के सेवा मुक्त मेजर जनरल मुकीश ख़ान ने अपनी पुस्तक, क्राईस ऑफ लीडरशिप में पृष्ठ २५० पर, वे सिक्खों के साथ हुई अपनी १९७१ ई की मुठभेड़ पर लिखते हैं कि हमारी पराजय का मुख्य कारण था, हमारा सिक्खों के आमने-सामने युद्ध करना। हम उनके आगे कुछ भी करने में असमर्थ थे। सिक्ख बहुत बहादुर और उनमें शहीद होने का एक विशेष जज़्बा व एक महत्त्वाकांक्षा है। वे अत्यंत बहादुरी से लड़ते हैं और उनमें सामर्थ्य है कि अपने से कई गुना संख्या में अधिक सेना को भी वे परास्त कर सकते हैं।

वे आगे लिखते हैं कि ३ दिसंबर, १९७१ ई को हमें अपनी पूर्ण क्षमता और दिलेरी से अपने इन्फैंट्री ब्रिगेड के साथ भारतीय सेना पर हुसैनीवाला के समीप आक्रमण किया। हमारी इस ब्रिगेड में पाकिस्तान की लड़ाकू ब्लूच रेजिमेंट और पंजाब रेजिमेंट भी थी और कुछ ही क्षणों में हमने भारतीय सेना के पांव उखाड़ दिए और उन्हें काफी पीछे हटने के लिए मज़बूर कर दिया। उनकी महत्त्वपूर्ण चौकियां अब हमारे कब्जे में थी। भारतीय सेना बड़ी तेजी से पीछे हट रही थी और पाकिस्तानी सेना अत्यंत उत्साह के साथ बड़ी तेजी से आगे बढ़ रही थी। हमारी सेना अब कोसरे-हिंद पोस्ट के समीप पहुंच चुकी थी। भारतीय सेना की एक छोटी-सी टुकड़ी वहां उस पोस्ट की सुरक्षा हेतु तैनात थी और इस टुकड़ी के सैनिक सिक्ख रेजिमेंट से सम्बंधित थे। एक छोटी-सी गिनती वाली सिक्ख रेजिमेंट ने लोहे की दीवार बन हमारा रास्ता अवरूद्ध कर दिया। वे पूरी शक्ति से सिक्ख जैकारा . . बोले सो निहाल, सति श्री अकाल . . के नारों से आकाश गुंजा रहे थे। उन्होंने हम पर भूखे शेरों की तरह और बाज़ की तेजी से आक्रमण किया। ये सभी सैनिक सिक्ख थे। यहां एक आमने-सामने की, आर-पार की, सैनिक से सैनिक की लड़ाई हुई। आकाश या अली और "बोले सो निहाल" के गगन भेदी नारों से गुंजायमान हो उठा। इस आर-पार की लड़ाई में भी सिक्ख सैनिक इतनी बेमिसाल बहादुरी से लड़े कि हमारी सारी महत्त्वाकांक्षाएं, हमारी सभी आशाएं धूमिल हो उठी, हमारे सभी सपने चकना चूर हो गए। इस जंग में ब्लूच रेजिमेंट के लेफ्टिनेंट कर्नल गुलाब हुसैन शहादत को प्राप्त हुए थे। उनके साथ मेजर मोहम्मद जईफ

**सैन खोज पत्रिका, नकोदर रोड़, खांबरा, ज़िला जलंधर, पंजाब १४४०२६*

और कप्तान आरिफ अलीम भी अल्लाह को प्यारे हुए थे। उन अन्य पाकिस्तानी सैनिकों की गिनती कर पाना मुश्किल था जो इस जंग में शहीद हुए। हम अश्चर्यचकित थे मुट्ठी भर सिक्खों के साहस और उनकी इस बेमिसाल बहादुरी पर! जब हमने इस तीन मंज़िला कंक्रीट की बनी पोस्ट पर कब्जा किया तो सिक्ख इसी की छत पर चले गये, जमकर हमारा विरोध करते रहे, हम से लोहा लेते रहे। सारी रात वे हम पर फायरिंग करते रहे और सारी रात वे अपने उद्घोष, अपने जैकारे . "बोले सो निहाल, सति श्री अकाल।" से अकाश गुंजायमान करते रहे। इन सिक्ख सैनिकों ने अपना प्रतिरोध अगले दिन तक जारी रखा, जब तक पाकिस्तानी सेना के टैंकों ने इनको चारों और से नहीं घेर लिया और इस सुरक्षा पोस्ट को गोलों से उड़ा डाला। यह सभी मुट्ठी भर सिक्ख सैनिक इस जंग में हमारा मुकाबला करते हुए शहीद हो गये परंतु तब अन्य सिक्ख सैनिक ने तोपखाने की मदद से हमारे टैंकों को नष्ट कर दिया। बड़ी बहादुरी से लड़ते हुए, इन सिक्ख सैनिकों ने मोर्चों में अपनी बढ़त कायम रखी और इस तरह हमारी सेना को हार का मुंह देखना पड़ा . अफसोस! इन मुट्ठी भर सिक्ख सैनिकों ने हमारे इस महान विजय अभियान को पराजय में बदल डाला, हमारे विश्वास और हौसले को चकना चूर करके रख डाला। ऐसा ही हमारे साथ ढाका-बंगला देश में भी हुआ था। जस्सूर की लड़ाई में सिक्खों ने पाकिस्तानी सेना से इतनी बहादुरी से प्रतिरोध किया कि हमारी रीढ़ तोड़कर रख दी, हमारे पांव उखाड़ दिए। यह हमारी हार का सबसे मुख्य और महत्त्वपूर्ण कारण था। सिक्खों का शहादत के प्रति प्यार, और सुरक्षा के लिए मौत का उपहास तथा देश के लिए सम्मान, उनकी विजय का एकमात्र कारण बने।



कविता

रहमत बनाए रखना

रहमत बनाए रखना, शुभ कर्म करवाए रखना।
हर पल सार्थक बनाना, बुरी भावना से बचाना।
ईर्ष्या, द्वेष से दूर रखना, लोभ-मोह में न ग्रसना।
सब्र और संतोष देना, नैया को मेरी खेना।'
सूक्ष्म-स्थूल हर रूप के, अहंकार से बचाए रखना।
रहमत बनाए रखना, शुभ कर्म करवाए रखना।
बस एक पर विश्वास रखूं, गुरबाणी से प्यार रखूं।
कड़वे न बोल बोलूं, किसी परिस्थिति में न डोलूं।
किसी के गुनाहों को न देखूं, स्वयं को कसौटी पर परखूं।
तुझे हाज़र-नाज़र जानूं, हर एक में तेरी जोत पहचानूं।
मेरी-तेरी को अब छोड़ूं, बस तुझ से नाता जोड़ूं।
हम अवगुणों से भरे हैं, तू गुणों का अथाह सागर।
कलयुगी प्रभाव गहरा, विकारों की अग्नि से बचाए रखना।
बस एक की बेनती है, बाणी का कवच पहनाए रखना।
रहमत बनाए रखना, शुभ कर्म करवाए रखना।

-डॉ. मनजीत कौर, २/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३

गुरबाणी चिंतनधारा : ९२

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

बाईसवीं असटपदी

सलोकु ॥
जीअ जंत के ठाकुरा आपे वरतणहार ॥
नानक एको पसरिआ दूजा कह द्रिसटार ॥१॥
(पन्ना २९२)

उपरोक्त पावन सलोक में गुरु पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी उस परिपूर्ण परमेश्वर की सर्वव्यापकता का ज़िक्र करते हुए कलयुगी जीवों को यही समझाते हैं कि वह समस्त जीव जंतुओं में आप समाया हुआ है। सर्वत्र में वही एक ही तो है दूसरा भला कहां दिखाई देता है?

गुरु पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि हे समस्त जीव-जंतुओं के पालनहार प्रभु जी! तू आप ही (स्वयं) सर्वत्र निवास करता हैं अर्थात् तेरी विद्यमानता कण-कण में है। सब जगह तू ही व्यापक है, उस मालिक के बिना और भला कौन दिखाई देता है अर्थात् उस परमेश्वर के बिना दूसरा कोई भी तो दृष्टिगत नहीं होता।

वस्तुत : उस मालिक की रहमत सदका जिसे यह बोध हो जाता है कि ईश्वर सर्वव्यापी है वह उसके बिना किसी भी वस्तु, जीव अथवा घटना की कल्पना ही नहीं कर सकता। उसके हृदय घर में सदैव उस परमेश्वर की विद्यमानता का एहसास तथा विश्वास बना रहता है।

गुरबाणी में अनेक स्थानों पर इसी तथ्य को उजागर किया गया है जैसे श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी में इसी भाव के दर्शन होते हैं :
तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी हरि एको पुरखु समाणा ॥ *(पन्ना ११)*

अर्थात् हे प्रभु! तू घट-घट में एक रस मौजूद है, तू स्वयं ही सब में समाया हुआ है। आगे भी इसी भाव को विस्तार देते हुए गुरु जी फरमान करते हैं कि तू ही जीवन का विशालतम् समुद्र है और सब तुझ में ही लहरों की तरह विद्यमान हैं। तेरे बिना दूसरा कोई भी नहीं, सब तेरा ही खेल तमाशा है यथा गुरबाणी प्रमाण है :

तूं दरीआउ सभ तुझ ही माहि ॥
तुझ बिनु दूजा कोई नाहि ॥
जीअ जंत सभि तेरा खेलु ॥
विजोगि मिलि विछुड़िआ संजोगी मेलु ॥
(पन्ना ११)

पंचम पातशाह जी ने तो उस परिपूर्ण परमेश्वर की सर्वव्यापकता का बोध करवाते हुए उसे अमृत स्वरूप सज्जन पुरुष ब्यान करते हुए सदैव उसकी शरण में रहते हुए उसकी समीपता का एहसास समूची मानवता को करवाया है। सूही राग में आपकी उच्चारण की हुई पावन बाणी है :

घट घट वासी सरब निवासी नेरै ही ते नेरा ॥
नानक दासु सदा सरणागति हरि अंम्रित सजणु मेरा ॥ *(पन्ना ७८४)*

गुरबाणी में संत जनों ने पुकार-पुकारकर यही संदेश दिया है कि प्रत्येक शरीर में परमेश्वर का निवास है। अत: नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब की वैराग्यमयी बाणी हमें यही पावन संदेश देती है कि (प्रत्येक जीव) अपने मन को समझा ले कि प्रभु-परमेश्वर का

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

सिमरन कर, जिसके फलस्वरूप संसार सागर के पार उतारा सहज ही हो जाएगा। गुरबाणी प्रमाण है :

घट घट मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ॥
कहु नानक तिह भजु मना भउ निधि उतरहि पारि ॥ *(पन्ना १४२७)*

अकाल पुरख परमेश्वर के रहस्यमयी कौतुकों को कोई जान नहीं पाया। यह भेद न तो कोई जान सका है और न ही इस रहस्य को जानना किसी का ध्येय है, चाहे उसकी गति और सीमा को कोई नहीं जान सकता लेकिन यह एहसास भी वह मालिक किसी विरले को करवाता है। गुरबाणी आशयानुसार :

जा कउ खोजहि सुरि नर देव ॥
मुनि जन सेख न लहहि भेव ॥
जा की गति मिति कही न जाइ ॥
घटि घटि घटि घटि रहिआ समाइ ॥
(पन्ना ११८१)

फिर भी यह तथ्य जग जाहिर है कि उसके भक्त-जन उसे कण-कण में समाया हुआ जानने वाले, सदैव आनंदमय रहते हैं :

असटपदी ॥
आपि कथै आपि सुननैहारु ॥
आपहि एकु आपि बिसथारु ॥
जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए ॥
आपनै भाणै लए समाए ॥
तुम ते भिंन नही किछु होइ ॥
आपन सूति सभु जगतु परोइ ॥
जा कउ प्रभ जीउ आपि बुझाए ॥
सचु नामु सोई जनु पाए ॥
सो समदरसी तत का बेता ॥
नानक सगल स्रिसटि का जेता ॥१॥ (पन्न २९२)

२२वीं असटपदी की पहली पउड़ी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने उस पारब्रह्म परमेश्वर की मौज तथा सर्वव्यापकता का रहस्य प्रकट करते हुए इस तथ्य को भी उजागर किया है कि इस प्रकार जिसे यह भेद समझ आ जाता है वही तत्ववेता एवं सच्चा सेवक कहलाता है, विश्व विजेता कहलाता है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि समस्त जीवों में अकाल पुरख परमेश्वर आप ही बोल रहा है और आप ही सुनने वाला है अर्थात् वह परिपूर्ण परमात्मा स्वयं ही वक्ता और श्रोता भी है तथा वह प्रभु स्वयं ही एक है और अनेक है अर्थात् जगत रचना से पूर्व केवल वह एक ही या अपनी ही रज़ा में वह एक से अनेक हो गया अर्थात् अपनी ही मौज में वह जगत सृजना करता है और अपनी ही मौज में वह इसे समेट लेता और अपने में एकाकार कर देता है। हे परमेशवर! तेरे बिना कुछ भी नहीं होता। तुझ से अलग कुछ भी नहीं है, तूने अपने हुक्म की डोर में सब कुछ पिरो रखा है।

जिस जीव को प्रभु स्वयं ही समझ बख़्शते हैं, वही मनुष्य ही वास्तविक नाम अर्थात् सच्चा नाम हासिल कर लेता है। वह समदृष्टि हो जाता है अर्थात् ऐसा मनुष्य ही सब को सम (बराबर) नज़र से देखता है और तत्ववेता (वास्तविक भेद को जानने वाला) हो जाता है। गुरु पातशाह अंतिम पंक्ति में स्पष्ट करते हैं, ऐसा मनुष्य विश्व-विजेता (सारे संसार को जीतने) वाला हो जाता है।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु पातशाह जी ने इस तथ्य को उजागर करते हुए कलयुगी जीवों को यह समझाया है कि सृष्टि का प्रत्येक आकार उस मालिक की सृजना है और उसमें स्वयं प्रभु समाया हुआ है। इस गूढ़ रहस्य की सूझ जिसे बख़्शना चाहता है वह मालिक उसे अपने दर-घर से नाम की दात बख़्शकर यह रहस्य खोल देता है। उसे नाम की दात बख़्शकर अपने में अभेद कर लेता है। जिसके फलस्वरूप जीव में समदर्शिता का गुण समाहित हो जाता और ऐसा मनुष्य अपना-पराया, मित्र-शत्रु सबको समदृष्टि

अर्थात् एक समान देखता है। जिसकी बदौलत वह सारी दुनिया पर फ़तहि हासिल कर लेता है। गुरबाणी में हम अनेक स्थानों पर इसी भाव के दर्शन करते हैं। परमेश्वर में अभेद हुए जीवों हेतु गुरबाणी प्रमाण है :

अनहत सुंनि रते से कैसे ॥
जिस ते उपजे तिस ही जैसे ॥ (पन्ना ९४३)

लेकिन यहां विचारणीय पहलू यह है कि यह अभेदता स्वयं के प्रयत्न से संभव नहीं हो सकती। जिन्हें परमेश्वर श्वास-ग्रास अपने सिमरन की दात बख़्शता है, वही इस परम अवस्था को प्राप्त करते हैं; वास्तव में जिन्हें सिमरन का प्रेम-प्याला नसीब होता है यथा :

आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ ॥
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ॥ (पन्ना १३७८)

यह समदृष्टि नसीब हुई भाई घन्हैया जी को भंगाणी के युद्ध में। मश्क द्वारा दुश्मनों को पानी पिलाने वाले भाई घन्हैया जी की शिकायत जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक पहुंची तो गुरु साहिब ने भाई घन्हैया जी को बुलाकर पूछा क्या यह सच है कि तुम दुश्मनों को पानी पिलाते हो, उन्हें पुन: सुरजीत कर देते हो? बड़ी विनम्रता से भाई घन्हैया जी ने विनती की कि हे सच्चे पातशाह! मुझे तो कोई दुश्मन नज़र ही नहीं आता। मुझे तो प्रत्येक में आप के ही दीदार होते हैं। तब गुरु साहिब ने प्रसन्न होकर उन्हें मरहम की डिब्बी देते हुए प्यार से कहा कि अब पानी के साथ-साथ उनके जख़्मों पर मरहम भी लगा दिया करो। यह है समदृष्टि का पुख्ता प्रमाण। इस संदर्भ में बाणी से दिशा-निर्देश मिलता है :

ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

यही नहीं इस अवस्था पर पहुंचे हुए बाणी आशयानुसार ही जीवन व्यतीत करते हैं :

बैरी मीत होए संमान ॥
सरब महि पूरन भगवान ॥ (पन्ना ११४७)

वास्तव में बाणी आशयानुसार जीवन व्यतीत करने वाले ही तत्ववेता है, परम ज्ञानी और विश्व विजेता हैं।

जीअ जंत्र सभ ता कै हाथ ॥
दीन दइआल अनाथ को नाथु ॥
जिसु राखै तिसु कोइ न मारै ॥
सो मूआ जिसु मनहु बिसारै ॥
तिसु तजि अवर कहा को जाइ ॥
सभ सिरि एकु निरंजन राइ ॥
जीअ की जुगति जा कै सभ हाथि ॥
अंतरि बाहरि जानहु साथि ॥
गुन निधान बेअंत अपार ॥
नानक दास सदा बलिहार ॥२॥ (पन्ना २९२)

दूसरी पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी परमेश्वर की दयालुता शक्तिशाली स्वरूप, माया के प्रभाव से रहित, सर्वव्यापकता आदि गुणों को स्मरण करते हुए जीवों को यही भरोसा दिलवा रहे हैं कि जिसकी रक्षा करने वाला सर्वशक्तिवान परमेश्वर है, उसे कोई मार नहीं सकता और जो ऐसे प्रभु को भुला देता है उसे तो मृत ही जानो और अंत में अनाथों के नाथ मालिक पर बलिहार जाते हैं तथा समूची मानवता को यही प्रेरणा देते हैं कि परम दयालु परमेश्वर को हर पल हाज़िर-नाज़िर जानना चाहिए, वही समस्त युक्तियों का मालिक, गुणों का खज़ाना है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि सभी प्राणी उस प्रभु के वश में हैं, वह दयालु-कृपालु है, अनाथों का नाथ (मालिक) है। जिस जीव की वह आप रक्षा करता है उसे कोई भी नहीं मार सकता। गुरु पातशाह उसे मृत प्राय: मानते हैं, जो परमेश्वर को विस्मृत कर देता है अर्थात् जिसने ऐसे दयालु प्रभु को भुला दिया असल में उसे मरा हुआ ही समझो। ऐसे प्रभु को छोड़कर भला और कोई कहां जाए अर्थात्

उसके सिवाय कहीं भी सच्चा ठिकाना नहीं। समस्त जीवों के सिर पर एक वही मालिक है, जो माया के प्रभाव से रहित है। निरंजन अर्थात् माया के प्रभाव से परे (और माया के प्रभाव से परे तो केवल ईश्वर ही हो सकता है क्योंकि माया उसकी दासी है जबकि सारा जगत माया का दास है।) उस परमेश्वर को अंदर-बाहर (कण-कण में रमा हुआ) अंग-संग (अपने साथ) जानो। जिसके वश में समस्त जीवों की ज़िंदगी का रहस्य (भेद) है अर्थात् जीव की उत्पति उसका लालन-पालन, विनाश तथा उद्धार सब कुछ की तरकीबें उसी के ही हाथ में है। वह परमेश्वर गुणों का खज़ाना है, अंत रहित तथा अपार है, जिसका कोई पार नहीं पा सकता। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि उस परमेश्वर के सेवक सदा उससे बलिहार जाते हैं।

उपरोक्त पउड़ी में परमेश्वर के शक्ति स्वरूप, ज्ञान स्वरूप के साथ रहम दिली, दयालु स्वरूप का भी सुंदर वर्णन किया गया है। चिंतकों के चिंतनानुसार शक्ति एवं ज्ञान का दुरुपयोग हो सकता है, इन्हें पाकर कोई विनाशकारी कार्य कर सकता है। लेकिन दयालु प्रभु तो गरीब, निमाने, असहाय जीवों पर दया करता है, उनकी ढाल बनकर रक्षा करता है, जिसका दुनिया में कोई नहीं साथ देता। उसका सच्चा साथी और सहारा प्रभु आप बनता है। कोई दुनिया में कितनी भी ताकत रखता हो, मारने की युक्तियां जानता हो लेकिन जिसकी रक्षा वह दयालु प्रभु आप करता है उसका कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता, जैसा कि लोक प्रचलित कहावत है :

जाको राखे सांईया मार सके न कोए।
बाल न बांका कर सके जां जग वैरी होए।

वास्तव में जीव का एक ही सच्चा सहारा पारब्रह्म परमेश्वर ही है और जिसने भी केवल उस सर्वकला समर्थ प्रभु का ओट-आसरा लिया है, उसे दुनिया की कोई भी हस्ती किंचित मात्र भी नुकसान नहीं पहुंचा सकती। गुरबाणी में अनेकों उदाहरण देकर यही विश्वास दृढ़ करवाया गया है। इस संदर्भ में श्री गुरु अंगद देव जी की पावन बाणी कितनी सार्थक है, जहां श्री गुरु नानक पातशाह द्वारा ली गई हर परीक्षा में भाई लहिणा जी सफल रहे, अंत में श्री गुरु नानक देव जी ने जब कहा सब चले गए, पुरखा तूं क्यों नहीं चला जाता? भाई लहिणा जी का कितना प्यारा जवाब था-- किसी का कोई होगा तो वो चले गए, मेरा तो एक बाबा नानक तू ही सब कुछ है, तेरे सिवाय कोई भी नहीं। गुरबाणी प्रमाण है :

किस ही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू ॥
(पन्ना ७९१)

चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है जिसमें गुरु साहिब ने स्पष्ट किया है इस संसार में किसी की गुटबंदी किसी के साथ है तो दूसरों की किसी और मित्र या रिश्तेदारों से या फिर सरकारी मुलाज़िमों अथवा चौधरियों से, लेकिन हमने तो सर्वव्यापी प्रभु से ही गुटबंदी की है, वही मेरा आसरा है। यथा गुरबाणी प्रमाण है :

किस ही धड़ा कीआ मित्र सुत नालि भाई ॥
किस ही धड़ा कीआ कुड़म सके नालि जवाई ॥
किस ही धड़ा कीआ सिकदार चउधरी नालि आपणै सुआई ॥
हमारा धड़ा हरि रहिआ समाई ॥१॥
हम हरि सिउ धड़ा कीआ मेरी हरि टेक ॥
(पन्ना ३६६)

अतः गुरबाणी हमें समस्त झूठे और स्वार्थी आसरों को छोड़कर एकमात्र दयालु प्रभु का सच्चा आसरा लेने हेतु प्रेरित करती है।

पूरन पूरि रहे दइआल ॥
सभ ऊपरि होवत किरपाल ॥
अपने करतब जानै आपि ॥

अंतरजामी रहिओ बिआपि ॥
प्रतिपालै जीअन बहु भाति ॥
जो जो रचिओ सु तिसहि धिआति ॥
जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥
भगति करहि हरि के गुण गाइ ॥
मन अंतरि बिस्वासु करि मानिआ ॥
करनहारु नानक इकु जानिआ ॥३॥ (पन्ना २९२

२२वीं असटपदी की तीसरी पउड़ी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पुन: उस परमेश्वर के दयालु स्वभाव एवं सर्वव्यापकता का ज़िक्र करते हुए साथ ही उस मालिक के हुक्म में सब कुछ होने का बोध करवाते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि वह ईश्वर दयालु है और जर्रे-जर्रे में समाया हुआ है अर्थात् सर्वत्र भरपूर है। वह सब पर रहमत करता है। अपने कौतुकों (रहस्यमयी खेलों) को वह स्वयं ही जानता है अर्थात् उसका भेद कोई नहीं जान सकता। वह अंतर्यामी है, अत: घट-घट की जानने वाला है तथा सर्वव्यापी है। वह अकाल पुरख जीवों की अनेक तरह से प्रतिपालना करता है। जिस किसी को भी उसने पैदा किया है वह उसी प्रभु की ही आराधना करता है अर्थात् उसने सब जीवों को पैदा किया है और सभी जीव ही उसका ध्यान धरते हुए सिमरन करते हैं। जिस जीव पर वह मालिक आप कृपा करता है उसे अपने साथ जोड़ लेता है। जिस पर उसकी रहमत होती है वह उसका यशोगान करते हुए उसकी भक्ति में लीन रहते हैं। ऐसे भक्त के हृदय में दृढ़ विश्वास हो जाता है। गुरु पातशाह अंतिम पंक्ति में फरमान करते हैं कि (ऐसा भक्त ही) उस वाहिगुरु को ही सब का कर्त्ता मानता है।

उपरोक्त पउड़ी में परमेश्वर की पूर्णता, प्रतिपालक रूप, दयालुता का विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है। गुरु पातशाह ने यह भी स्पष्ट किया है जिस पर उसकी विशेष कृपा दृष्टि होती है वही उस पारब्रह्म परमेश्वर का नाम जपते हुए उसी में लीन होने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं। वैसे भी गुरबाणी आशयानुसार उस परमेश्वर की रहमतों की वर्षा तो आठों पहर हो रही है। कोई गुरु कृपा से इस रहमत का पात्र बन जाता है और कोई वंचित रह जाता है अपनी मनमुखता के कारण। पंचम पातशाह ने गुरबाणी में अन्यत्र भी इसी भाव को दृढ़ करवाया है कि किस प्रकार प्रभु-नाम की अमृतधारा रिमझिम बरसती रहती है और व्यक्ति का मन शबद विचार के माध्यम से उसे पीता रहता है और परमेश्वर के मिलाप का आनंद प्राप्त कर लेता है। गुरु पातशाह फरमान करते हैं :

झिमि झिमि वरसै अंम्रित धारा ॥
मनु पीवै सुनि सबदु बीचारा ॥
अनद बिनोद करे दिन राती सदा सदा हरि केला जीउ ॥
जनम जनम का विछुड़िआ मिलिआ ॥
साध क्रिपा ते सूका हरिआ ॥ (पन्ना १०२)

सच में उस मालिक की कृपा दृष्टि सब पर होती है लेकिन यह कृपा दृष्टि हमारे कर्मों के लेखे-जोखे के कारण कम या ज्यादा हो सकती है। गुरबाणी प्रमाण है :

माझ राग में श्री गुरु अमरदास जी की पावन बाणी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है :

सभना उपरि नदरि प्रभ तेरी ॥
किसै थोड़ी किसै है घणेरी ॥
तुझ ते बाहरि किछु न होवै गुरमुखि सोझी पावणिआ ॥ (पन्ना ११९)
जनु लागा हरि एकै नाइ ॥
तिस की आस न बिरथी जाइ ॥
सेवक कउ सेवा बनि आई ॥
हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥
इस ते ऊपरि नही बीचारु ॥
जा कै मनि बसिआ निरंकारु ॥
बंधन तोरि भए निरवैर ॥

अनदिनु पूजहि गुर के पैर ॥
इह लोक सुखीए परलोक सुहेले ॥
नानक हरि प्रभि आपहि मेले ॥४॥ (पन्ना २९३)

चौथी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह प्रभु सेवक की उच्चवस्था का वर्णन करते हुए स्पष्ट करते हैं कि किस प्रकार प्रभु का सेवक नाम में लीन होकर उस परमेश्वर के हुक्म को जान लेता है और परमपद को प्राप्त होकर अपना लोक और परलोक दोनों ही सवार लेता है।

श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि जो सेवक एक पारब्रह्म परमेश्वर के नाम में टिक जाते हैं अर्थात् सहज अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं, उनकी (प्रभु मिलाप की) आस (आशा) खाली नहीं जाती अर्थात् प्रभु नाम से जुड़ाव के फलस्वरूप जीव की शुभ आशाएं फलीभूत हो जाती है। प्रभु के सेवक को यही शोभा देता है कि वह सबकी सेवा करे। (इस सेवा) तथा हुक्म मानने की बदौलत उसे परमपद (सर्वोच्च) पद की प्राप्ति हो जाती है। जिन के हृदय घर में प्रभु-परमेश्वर आप बस जाता है, उन्हें नाम-सिमरन से ऊंचा कोई और विचार नहीं सूझता अर्थात् उनके चिंतन में प्रभु का सिमरन ही चलता है क्योंकि उनके लिए यही सर्वोच्च विचार है। माया के बंधनों से मुक्त होकर वह निरवैर हो जाता है और हर पल गुरु के चरण पूजता है। (क्योंकि गुरु-कृपा से ही उन्हें प्रभु-सिमरन की सर्वोत्म दात प्राप्त हुई होती है, इसलिए वे सतिगुरु के चरणों में नत्मस्तक रहते हैं।) उपरोक्त सेवकों का लोक एवं परलोक दोनों ही सफल हो जाते हैं अर्थात् उसकी रजा में राजी रहते हुए इस दुनिया में भी सुखी रहते है तथा परलोक में भी प्रसन्न रहते हैं (इस लोक में करने योग कर्म करते हुए अपना परलोक भी सफल बना लेते हैं) गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि परमेश्वर ने आप ही (ऐसे सेवकों) को अपने साथ मिला लिया है।

वस्तुत: पूर्ण विश्वास के साथ प्रभु-सिमरन की बदौलत जीव मनोवांछित फल की प्राप्ति सहज ही कर लेता है। ऐसे जीव की सेवा-सिमरन की बदौलत अपने मालिक से गहरी सांझ बन जाती है अर्थात् निक्ट का सम्बंध बन जाता है। उसकी रजा में राजी रहते हुए गुरमुख प्यारे सेवा और सिमरन को ही अपने जीवन का प्रमुख पहलू समझकर अपना लोक-परलोक सफल बना लेते हैं। माया के बंधनों से मुक्त ऐसे सेवकों की उस मालिक से घनिष्ठ मित्रता बनी रहती है। वैसे भी चिंतकों के चिंतनानुसार गुरु-दर पर दो ही चीजें प्रवान है सेवा और सिमरन। सेवा करके पहले इस हृदय रूपी बर्तन को निर्मल एवं उज्ज्वल करना है ताकि उसमें परमेश्वर का अमृतमयी नाम टिक सके। अन्यथा जीव अपनी प्रत्येक प्राप्ति का गुमान (अभिमान) कर बैठता है और उसकी सारी मेहनत व्यर्थ चली जाती है इसके विपरीत जब वह विनम्र भाव से इन प्राप्तियों का श्रेय गुरु एवं प्रभु को देता है तो उस पर और रहमतें बरसती हैं। जब वह हृदय से गुरबाणी आशयानुसार यह भाव रखता है :

तू दाना तू अबिचलु तूही तू जाति मेरी पाती ॥
तू अडोलु कदे डोलहि नाही ता हम कैसी ताती ॥१॥
एकै एकै एक तूही ॥
एकै एकै तू राइआ ॥
तउ किरपा ते सुखु पाइआ ॥ (पन्ना ८८४)

अर्थात् तू ही सम्मानयोग्य है, अटल, अडोल है, तू स्थिर है तो फिर हमें क्या चिंता क्योंकि तू ही हमारा सर्वस्व है, तू एक ही है और तेरी कृपा से ही सुखों की प्राप्ति होती है।

अत: जब जीव अपनी समस्त सियानपों, चतुराइयों को त्यागकर गुरु-कृपा से उस मालिक की रहमत का पात्र बनकर हर पल उसी का शुक्राना करता है तो उसके लोक और परलोक दोनों ही संवर जाते हैं, ऐसे जीवों का जगत में आना धन्य है।



ख़बरनामा

धार्मिक परंपरायों को ठेस पहुंचाने वाले शरारती अनसरों के विरुद्ध सख़्त कार्यवाई हो : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २७ मई : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने सोशल साईट पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश करने की तरह धार्मिक परंपराएं निभाने की नकल कर कुछ शरारती अनसरों द्वारा किसी अन्य वस्तु को रखकर शरारत भरे लहजे में अरदास करने वाली घटना की सख़्त निंदा करते हुए प्रशासन से मांग की है कि शरारती अनसरों का पता लगाकर उनके विरुद्ध सख़्त कार्यवाही की जाए।

उन्होंने कहा कि वॉट्स-एप तथा फेसबुक जैसी सोशल साईट पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का मज़ाक उड़ाने से पूरे विश्व में सिक्ख भाईचारे के मनों में भारी क्षति पहुंची है। उन्होंने कहा कि सिक्ख प्रत्येक धर्म का दिल से सम्मान करते हैं किंतु यदि कोई व्यक्ति सिक्ख धर्म के विरुद्ध घिनौनी हरकत करता है तो वो किसी भी कीमत पर बर्दाश्त (सहन) नहीं किया जाएगा। उन्होंने प्रशासन को ज़ोर देकर कहा कि ऐसे अनसरों का कोई धर्म नहीं होता, इसलिए इनको तुरंत गिरफ्तार किया जाए ताकि आगे से धर्म के नाम पर होती ऐसी घिनौनी तथा असहनीय घटनायों पर अंकुश लगाया जाए।

गुरुद्वारा साहिबान की ज़मीनों को बचाने हेतु पाकिस्तान सरकार द्वारा उठाया कदम प्रशंसनीय : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २८ मई : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने श्री गुरु नानक देव जी के जन्म स्थान गुरुद्वारा ननकाणा साहिब पाकिस्तान में गुरुद्वारा साहिबान की ज़मीनों से नाजायज़ कब्ज़े हटाने के लिए पाकिस्तान सरकार द्वारा उठाये गए कदम की प्रशंसा की है।

उन्होंने कहा है कि पाकिस्तान में सिक्खों की ज़मीनों को बचाने हेतु शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी अपनी आवाज़ समय-समय पर उठाती रही है। उन्होंने कहा कि जो सिक्ख अनुचित किस्म के विषयों पर बहस कर कौम को उलझाए रखते हैं, उनको चाहिए कि वो गुरुधामों की बहुमूल्य ज़मीन को बचाने हेतु कड़ा परिश्रम कर अपना योगदान डालें।

मेक्डोनलड कंपनी द्वारा लिखित क्षमा-याचना करना अच्छी बात : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ६ जून : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने कहा है कि मेक्डोनलड कंपनी ने इटली में अंतर्राष्ट्रीय एकस्पो मेले में खाना परोसने वाली

ट्रे (तश्तरी) में रखे गए पोस्टर पर रूहानियत के केंद्र सचखंड श्री हरिमंदर साहिब की तस्वीर लगाकर बज्जर (भारी) गलती की थी, जिसका शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने सख़्त नोटिस लेते हुए मेक्डोनलड कंपनी को तुरंत पेंफलिट से श्री हरिमंदर साहिब की तस्वीर उतारने तथा इस बज्जर गलती की तुरंत क्षमा-याचना करने को कहा था। जिस पर मेक्डोनलड कंपनी ने पेंफलिट पर सचखंड श्री हरिमंदर साहिब की तस्वीर छपने के कारण सिक्ख भावनाओं को पहुंची क्षति पर अफ़सोस प्रकट करते हुए क्षमा मांगी है। जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि किसी को भी ऐसा करने की हरगिज़ इजाज़त नहीं दी जाएगी; जिससे सिक्ख भावनाओं से खिलवाड़ और धार्मिक स्थानों का अपमान होता है।

जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा सिक्ख नवयुवकों पर केस दर्ज करना अनुचित : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : १२ जून : जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा सिक्ख नवयुवकों पर दर्ज किए पर्चों को जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने सरासर गलत करार देते हुए घटना की सम्पूर्ण जांच देश की स्र्वोच्च एजंसी सी. बी. आई. द्वारा करवाने की मांग की है। जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि जम्मू-कश्मीर सरकार द्वारा अब तक की सम्पूर्ण कार्यवाही एकतरफा और सिक्खों के विरुद्ध है जो नहीं होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि जिस देश की आज़ादी के लिए मात्र सिक्खों ने ही ८० प्रतिशत से अधिक कुर्बानियां दी हों, क्या उस देश में सिक्खों को शांतमयी रहकर अपने संतों-महापुरुषों का पोस्टर लगाने का भी अधिकार नहीं? उन्होंने कहा कि आज भी देश के लिए सीमाओं पर दुश्मन फौजों से लोहा लेने के लिए सिक्ख फौजी सीना तानकर खड़ें हैं अगर कहीं भी देश को कुर्बानी की ज़रूरत पड़ती है तो सिक्ख कभी भी पीछे नहीं हटते। उन्होंने कहा कि अपने देश के लिए तो सिक्खों ने प्रथम, द्वितीय विश्व युद्ध के समय भी विदेशों के लिए बड़ी शहादतें दी थीं। आज वो देश सिक्खों की कुर्बानियों को याद कर उनके परिवारों को सम्मानित कर रहे हैं परंतु अपने ही देश में सिक्खों से बेगानों जैसा व्यवहार किया जा रहा है, जो जम्मू सरकार के लिए उचित नहीं। उन्होंने कहा कि एक तरफ जम्मू सरकार जांच की बात कर रही है और दूसरी तरफ सिक्ख नवयुवकों पर केस दायर कर रही है। इन हालातों में जम्मू सरकार द्वारा की जाने वाली जांच निष्पक्ष नहीं हो सकती। इसलिए सरकार को चाहिए कि वह ईमानदारी से कार्य करते हुए इस केस की सी. बी. आई. जांच करवाए। उन्होंने सम्पूर्ण सिक्खों को ज़ोर देकर कहा कि सिक्खों ने सदैव ही ज़ब्र का मुकाबला सब्र से किया है। उन्होंने कहा कि जम्मू-कश्मीर में सिक्ख नवयुवकों पर केस दायर करने की बजाए उन पुलिस वालों और शरारती अनसरों के विरुद्ध दायर होने चाहिए जिन्होंने पोस्टर फाड़ कर शांत बैठे सिक्खों में बिना वजह भड़काहट पैदा की है।



प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०७-२०१५